श्री श्वे० स्था० जैन स्वाध्यायी संघ, गुलाबपुरा का ४९वां पुष्प

卐

सोहन काव्य-कथा मंजरी

भाग ६

卐

प्रकाशक :
श्री श्वे. स्था. जैन स्वाध्यायी संघ
गुलाबपुरा-३११०२१ (राज.)

रचनाकार :
स्वाध्याय-शिरोमणि, आचार्यप्रवर
श्रद्धेय सोहनलालजी म.सा.

卐 सोहन काव्य कथा मंजरी

भाग-६

(३५ चरित्रों का संग्रह)

卐 रचनाकार :

आचार्यप्रवर, श्रद्धेय सोहनलालजी म.सा.

卐 सम्पादक :

प्रवचन-प्रभाकर, श्री वल्लभमुनिजी म.सा.

卐 प्रथम संस्करण :

जनवरी १९९५

卐 मूल्य :

लागत मूल्य १२.०० रु.

卐 मुद्रक :

मंगल मुद्रणालय

३/९ गंज, महावीर सर्किल

अजमेर ।

卐 प्रकाशक :

श्री श्वे. स्था. जैन स्वाध्यायी संघ

गुलाबपुरा (राज.)

प्रकाशकीय

साहित्य की विधाओं में कथा उतनी ही प्राचीन है जितनी कि स्वयं मानव-सृष्टि।

जब दो व्यक्ति मिलते हैं एवं परस्पर कुशल-क्षेम के समाचार पूछते हैं, तब वे अपनी कहानी ही कहते हैं या सुनाते हैं। यह कहानी का उद्गम स्रोत है।

तब से अब तक इस कहानी ने एक लंबी दूरी की यात्रा तय की है। कथा से कहानी, फिर लघुकथा व बोधकथा के रूप में विकसित होकर अब वह अ-कहानी की सीमा को स्पर्श करने लगी है।

किसी भी आयु के व्यक्ति के लिए कहानी सुनना या पढ़ना आनन्ददायक होता है। अपने देश में ही दादी-नानी के द्वारा कहानी कहने-सुनने की परम्परा चली आ रही है। शिक्षितों और अशिक्षितों में समान रूप से कहानी की विधा लोकप्रिय है। विविध घटनाक्रम के साथ संजोए गए पात्रों के गतिमान जीवन के माध्यम से मानो पाठक अपने ही जीवन की कहानी पढ़ता है। वह घटना भी अपनी बात कहकर पाठक के मन में निराकार रूप से पैठकर उसे आन्दोलित करती रहती है अत: उसकी अनुगूंज तो लम्बे समय तक सुनाई पड़ती रहती है। इस प्रकार कहानी जीवन से जुड़कर जीवन-मूल्यों की समृद्धि का माध्यम बनती है।

कथा का मूल आधार घटना का चमत्कार होता है तथा घटना-चमत्कार किसी धार्मिक, नैतिक या साहसिक मूल्य की स्थापना करता है। अति प्राचीनकाल में लिखी गई पंचतंत्र, हितोपदेश, बेताल पच्चीसी, सिंहासन बत्तीसी आदि की कथाएं नीति की शिक्षा प्रदान करनेवाली रही हैं जिससे व्यक्ति व समाज के जीवन को एक दिशा मिली है। इनमें वर्णित व्यक्ति एकाकी न होकर सम्पूर्ण समाज के एक प्रतिनिधि के रूप में उपस्थित होता है इसलिए पाठक उसके जीवन से प्रेरणा प्राप्त कर पाते हैं। यद्यपि कथा का प्रस्थान बिन्दु व्यक्ति है किन्तु गन्तव्य तो समाज ही होता है।

इस कथा-शिल्प के साथ यदि काव्यात्मकता का भी मधुर मेल हो जाय तो सोने में सुगन्ध आ जाती है। गेयत्व का मेल होने के कारण, माधुर्य में अभिवृद्धि होने से उसकी प्रभावशीलता द्विगुणित होकर पाठक के मन पर स्थायी असर कर जाती है।

प्रस्तुत काव्यात्मक कथा-संकलन के कथाशिल्पी विद्वद्वरेण्य, परमश्रेष्ठ, मधुरवक्ता, आशुकवि, गुरुवर्य श्री सोहनलालजी म.सा. एक ऐसे ही अमर कथाकार हैं जिन्होंने अपनी कथाओं के माध्यम से तर्कजाल की भांति उलझे हुए मनुष्य के मन की समस्याओं को सुलझाया है, सांसारिक व्यामोह से उसे मुक्तकर मानवीय संवेदनाओं की अनुभूति से उसे सम्पन्न बनाया है और इस प्रकार स्वस्थ, अनासक्त एवं समर्पित व्यक्ति का तथा शुद्ध आचार वाले समाज का निर्माण किया है।

वि. सं. २०४४ का वर्ष श्री स्वाध्यायी संघ के आद्य-संस्थापक, राजस्थान-केसरी, श्रद्धेय गुरुवर्य श्री पन्नालालजी म.सा. का जन्मशती वर्ष था। इसी समय, हमारी आस्था के केन्द्र स्वाध्याय-शिरोमणि, श्रद्धेय गुरुवर्य आचार्य श्री सोहनलालजी म.सा. ने अपने जीवन के ७७वें वसन्त में प्रवेश कर अपने महिमा-मंडित जीवन से हमें गौरवान्वित किया है। इसी वर्ष पूज्य गुरुवर्य द्वारा समुपदिष्ट श्री श्वे. स्था. जैन स्वाध्यायी संघ गुलाबपुरा ने भी अपनी स्थापना के ५० वर्ष पूरे किए हैं। इस प्रकार यह त्रिवेणी-संगम हम सभी के लिए परम हर्ष का विषय रहा है।

पूज्य गुरुदेव के अनुयायी भक्तों की यह हार्दिक अभिलाषा थी कि उनके अब तक के प्रकाशित व अप्रकाशित काव्यात्मक कथानकों को—जो लगभग ३०० से भी अधिक हैं—क्रमशः प्रकाशित कराया जाय ताकि पाठक उनसे समुचित लाभ उठा सकें एवं साहित्य के अनुसंधित्सुओं के लिए भी पथचिह्न बन सकें। वर्तमान दूषित वातावरण में युवकों को सत्साहित्य उपलब्ध नहीं होने से वे घटिया एवं चरित्रहन्ता साहित्य पढ़कर अपना समय नष्ट करते हैं। उन्हें भी व्यवहार व धर्मनीतिपरक साहित्य सुलभ कराना भी इसका एक उद्देश्य रहा है।

इसी भावना के अनुसार पूज्य गुरुदेवश्री द्वारा रचित कथानकों को क्रमशः प्रकाशित करने की योजना बनी। सोहन काव्य-कथा मंजरी के ५ भाग, जनवरी १९९१ तक प्रकाशित हो चुके हैं, जिन्हें पाठकों ने काफी सराहा है। इसका यह छठा पुष्प पाठकों को सादर समर्पित करते हुए परम हर्ष है।

इस संकलन को तैयार करने में वि.सं. २०५० का चातुर्मास हमारे लिए स्मरणीय है। परमश्रद्धेय, आचार्यप्रवर श्री सोहनलालजी म.सा. ठा: ६ के चातुर्मास का अजमेर क्षेत्र को सौभाग्य प्राप्त हुआ। इसी चातुर्मास में इस काव्यकृति का संकलन व संपादन किया गया था। इस संकलन को तैयार करने में हमें ओजस्वी वक्ता, प्रखर प्रतिभा के धनी, प्रवचन प्रभाकर श्रद्धेय वल्लभमुनिजी म.सा. का हार्दिक सहयोग मिला जिन्होंने आद्योपान्त सभी कथानकों को पढ़कर आवश्यकीय सुझावों से लाभान्वित किया है।

हमारी भावना थी कि श्रद्धेय प्रवचन प्रभाकर श्री वल्लभमुनिजी म.सा. के समक्ष ही उनके परिश्रम की फलश्रुति प्रस्तुत हो पाती किन्तु एकाधिक अपरिहार्य कारणों से प्रकाशन में विलम्ब होता गया एवं श्रद्धेय वल्लभमुनिजी म.सा. को आसोज सुदी १२ सं. २०५० के दिन काल ने हमसे छीन लिया। हम सभी निरुपाय रहे। आज उनके परिश्रम की यह छठी कड़ी आप सभी के समक्ष प्रस्तुत करने का सुअवसर मिल सका है, इसके लिए हम पूज्य गुरुवर्य की कृपा के ऋणी हैं।

श्रीमान् गजराजजी सा. नाहर, हस्तीमलजी सा. नाहर मसूदावालों ने अपने पिताश्री श्रीमान् गुलाबचंदजी सा. की ओर से एवं श्रीमान् माणकचंदजी सा. नाहर की पावन स्मृति में तथा श्रीमान् लक्ष्मीचंदजी, पुखराजजी, अशोककुमारजी सा. बुरड़ मसूदा वालों ने अपने पिताश्री श्रीमान् लालचंदजी सा. की पावन स्मृति में, अपनी ओर से अर्थ सहयोग प्रदान कर इसका प्रकाशन कराया है अतः हम उनके आभारी हैं।

आशा है पाठकगण इस काव्य कथामाला से लाभ प्राप्तकर जीवन में नैतिकता विकसित करेंगे, इसी विश्वास से—

—नेमीचन्द खाबिया
मंत्री
श्री श्वे. स्था. जैन स्वाध्यायी संघ

गुलाबपुरा
दि. १ दिसम्बर १९९४

भूमिका

जीवन की शिक्षा जीवन से ही संभव है। छोटी-छोटी कथाओं के माध्यम से जीवन के अनुभवों को प्रस्तुत करके जीवन की शिक्षा देने की सुदृढ़ परम्परा हमारे देश में विद्यमान है। इतिहास-पुराण आदि में ऐसी अनेक कथाएं मिलती हैं। बौद्ध परम्परा में जातक-कथाएं हैं तो जैन परम्परा में भी ऐसी कथाओं का प्राचुर्य है। हितोपदेश, पंचतंत्र, वृहत्कथा, कथा सरित्सागर, सहस्त्ररजनी चरित, शुक सप्तति, सिंहासन द्वात्रिंशतिका, बेताल पंचविंशतिका आदि प्राचीन कथा संग्रह मनोरंजक भी हैं और प्रेरणाप्रद भी।

इनकी कथाओं को अलग-अलग प्रसंगों में अलग-अलग भंगिमाओं के साथ प्रस्तुत करने के प्रयास हुए हैं। नई-नई कथाएं जुड़ती रहीं। कहीं पुरानी कथाओं का नवीनीकरण किया गया। प्रसंग बदल गए, कथा का उद्देश्य भी बदल गया पर उसकी संरचना जिस मनोवैज्ञानिक सत्य का उद्घाटन करने के लिए हुई थी, वह यथावत् रहा।

प्रस्तुत संकलन में छोटी-छोटी कथाएं पद्य-बद्ध रूप में प्रस्तुत की गई हैं। इन कहानियों में रचनाकार गुरुवर्य, आचार्यप्रवर श्री सोहनलालजी म.सा. ने जीवन के सहज सत्यों को नए आकर्षक ढंग से प्रस्तुत किया है। प्रत्येक कथा अध्यात्म की उन ऊँचाइयों का स्पर्श करानेवाली है जिन्हें आज की भाषा में नैतिकता कहते हैं। भौतिक संसार की नश्वरता को कवि ने जीवन का स्वप्न कहा है। निद्रा का स्वप्न आंख खुलने पर मिट जाता है और जीवन स्वप्न आंख मींचने पर विरला जाता है। कवि अपनी प्रत्येक कथा में इस शाश्वत सत्य को विभिन्न उपमाओं, रूपकों व दृष्टान्तों से जब प्रस्तुत करते हैं तो मन मोहित हो जाता है। काव्य की सहज प्राञ्जल भाषा ने इनके कथ्य को सुबोध एवं सहज ग्राह्य बना दिया है।

बात तो कोई भी कह सकता है, पर बात ऐसी हो जो जमे। सुननेवाले को विश्वसनीय लगे, तब वह सुनी जायगी। अन्यथा तो सुनकर भी उसे अनसुना कर दिया जायगा। ये कहानियां सुनने योग्य हैं, पढ़ने योग्य हैं और स्मरण करने योग्य भी हैं। इनमें जीवन के सत्य के साथ एक चिन्तक एवं कवि-हृदय सन्त का अनुभव भी बोलता है। पूज्य आचार्यप्रवर, गुरुदेवश्री जीवन के एक तटस्थ दृष्टा हैं। आसक्ति से परे, राग-द्वेष से रहित उनके हृत्फलक पर संसार के स्वरूप के जो बिम्ब उभरे हैं, वे हृदय स्पर्शी हैं। कवि जब निर्लिप्त-भाव से अपने उन अनुभवों को शब्दों में आकार प्रदान करता है तो ऐसा लगता है मानो शुष्क दार्शनिक नहीं वरन् जीवन की गहराई में डूबा कोई योगी बोल रहा है। ये कथाएं इसलिए मर्मस्पर्शी तो हैं ही पठनीय एवं मननीय भी हैं।

अच्छी कहानी के दो गुण होते हैं – एक, संकेत (Suggestion) और दूसरा, गूंज (Echo)। इन दो गुणों के माध्यम से कथा का मनोवैज्ञानिक सत्य परिपुष्ट होकर प्रकट होता है। ये कथाएं इन दोनों गुणों से समन्वित हैं। एक बार सुनने या पढ़ने के बाद

इनकी गूंज लम्बे समय तक श्रोता या पाठक के मन को तरंगित करती रहती है। आचार्यप्रवर को लोक हृदय की अच्छी परख है, उनकी सूक्ष्म गहरी एवं निरीक्षक दृष्टि पैनी है इसलिए प्रत्येक कथा सामाजिकों के गुह्यतम हृदय प्रदेशों तक पहुंच कर एक विशिष्ट प्रभाव छोड़ती है।

शीर्षक ही इतने आकर्षक हैं कि भुलाए न भूलें। 'रत्न गंवाए-मूर्ख कहावे', 'मान से बढ़ जाए संसार', 'सबको प्यारे प्राण', 'न सज्झाय समं तवो', 'दु:खदायी दुष्टों का संग' जैसे शीर्षक तो लोक में कहावत रूप में प्रचलित होंगे।

कथाओं के द्वारा जैन शासन के मूल-सूत्रों को अतीव सरल भाषा में प्रस्तुत किया गया है। सिद्धान्तों की रुक्षता को कथानकों की कमनीयता से कम किया गया है। ऐसी शैली को आज की भाषा में अप्रत्यक्ष उपदेश (Indirect Preaching) कहा जाता है। इसे शिक्षण की सर्वोत्तम विधि माना जाता है। कवि का कथाकार व उपदेशक का रूप इस प्रकार परस्पर गुम्फित हो गया है कि उन्हें अलग करके नहीं देखा जा सकता। सर्वत्र कवि ने कहकर नहीं वरन् वैसा जीवन जीकर सिखाया है अत: प्रत्येक कथा की प्रभावोत्पादकता बढ़ गई है।

अन्य कथानकों की भांति प्रस्तुत संग्रह में भी राधेश्याम रामायण, लावणी बड़ी, द्रोण, लावणी छोटी, कोरो काजलियो सदृश लोक तर्जों का उपयोग किया है, वहीं नेमजी की जान बनी भारी, एवन्ता मुनिवर नाव तिराई बहता नीर में, हो भवियण सरणा चार जैसी जैन समाज में प्रचलित विशुद्ध भावपूर्ण तर्जों पर भी रचनाएं की हैं। इन लोकप्रिय धुनों में गेयकाव्य को इतनी कुशलता से बांधा है कि पाठक व श्रोतागण भी उनके साथ ही भावविभोर होकर गा उठता है।

जहां तक भाषा का प्रश्न है, कथाओं की भाषा काव्य-भाषा है। कहीं भी दुरूहता नहीं, शब्दों की तोड़-मरोड़ नहीं। आलंकारिक छटा भी है किन्तु वह सायास नहीं—सहज है। रचनाकार सिद्धहस्त कवि हैं। सरल, सुबोध भाषा में रचित अनेक काव्य कृतियां प्रकाशित हो चुकी हैं। आचार्यश्री धर्म के गूढ़ रहस्यों को काव्य-कथाओं की मनोमुग्धकारी शैली में बाल घुट्टी की तरह प्रस्तुत कर रहे हैं। कथा का चमत्कारपूर्ण प्रवाह और काव्य का मीठास इसमें एक साथ विद्यमान है। गेयता इनका अतिरिक्त गुण है। अब पाठकों और श्रोताओं का काम है कि इन काव्य कथाओं को पढ़ें, सुनें, गुनगुनायें और इनमें संकेतित जीवन-मूल्यों को जीवन में धारण करें। तभी इनकी रचना का श्रम सार्थक होगा।

डॉ. बद्रीप्रसाद पंचोली
एम.ए., पीएच.डी.
पूर्व हिन्दी विभागाध्यक्ष
राजकीय महाविद्यालय, अजमेर

अजमेर
दि. २७ नवम्बर १९९४
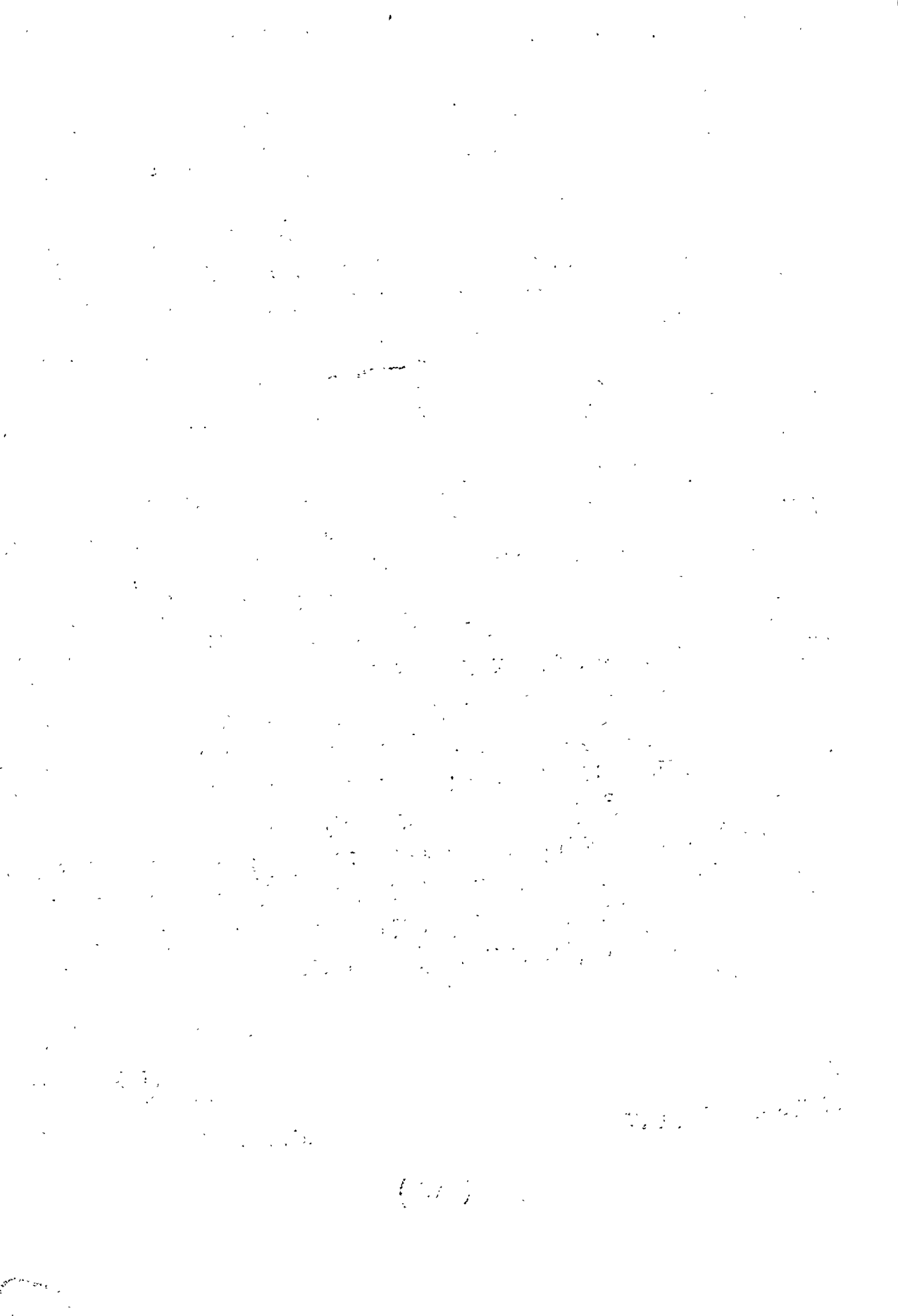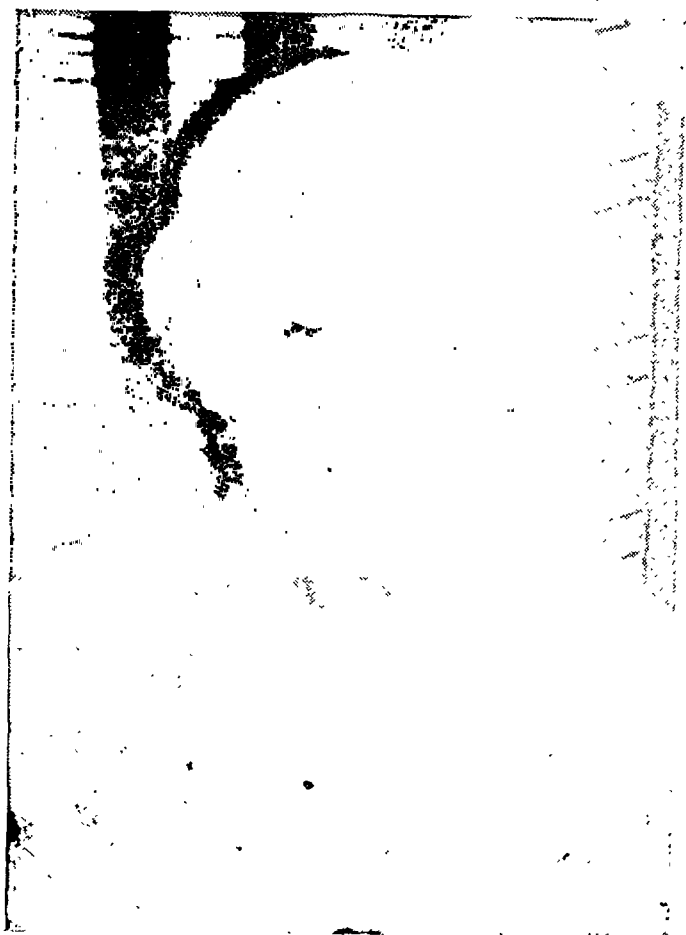
(श्रीमान् गुलाबचंदजी सा. नाहर, मसूदा)

मसूदा (जिला अजमेर) निवासी गुलाबचन्दजी सा. नाहर एक अच्छे धार्मिक, श्रद्धाशील श्रावक हैं। व्यापार में प्रामाणिकता तथा व्यवहारकुशलता से सभी जनों में अच्छी लोकप्रियता प्राप्त की है। स्थानीय श्रावक संघ के वर्षों तक अध्यक्ष रहे एवं स्थानक-भवन व महावीर भवन के निर्माण में समर्पण भाव से योगदान दिया। आपके सुपुत्र श्रीमान् गजराजजी सा. नाहर भी योग्य, कर्मठ व उत्साही कार्यकर्ता हैं एवं वर्तमान में श्रावक संघ के अध्यक्ष हैं तथा अनेक संस्थाओं से जुड़े हुए हैं।

नाहर परिवार श्रद्धेय महाप्राज्ञ श्री पन्नालालजी म.सा. एवं आचार्यप्रवर श्री सोहनलालजी म.सा. का उपासक परिवार है। आपका उदार सहयोग अनुकरणीय है।

॥ जय गुरु पन्ना ॥ ॥ जय गुरु सोहन ॥ ॥ जय गुरु सुदर्शन ॥

स्वाध्याय संघ के आद्य प्रणेता

पूज्य प्रवर्त्तक गुरूदेव श्री पन्नालाल जी म.सा. की **116** वीं

जन्म जयन्ति के उपलक्ष में स्वाध्यायार्थ उपहार

मेहता, बिजयनगर ✆ 230527

(श्रीमान् स्व. माणकचन्दजी सा. नाहर)

श्रीमान् गुलाबचंदजी सा. नाहर के लघुभ्राता श्रीमान् माणकचंदजी सा. नाहर भी सम्पूर्ण समाज में आदरणीय रहे हैं। आपका स्वभाव बहुत ही मधुर व मिलनसार था इस कारण शीघ्र ही सभी जनों में लोकप्रिय हो जाते थे। सामाजिक एवं धार्मिक कार्यों में पूर्ण रुचि रखते थे। आपके समान ही आपके सुपुत्र श्रीमान् हस्तीमलजी सा. नाहर भी समाज के अग्रणी कार्यकर्ताओं में से हैं जो तन-मन-धन से समाज के विकास के प्रति सर्वात्मना समर्पित हैं।

प्रस्तुत कृति के प्रकाशन में आपका सहयोग प्रशंसनीय एवं अनुकरणीय है।

१
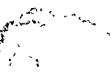
रत्न गंवाये : मूर्ख कहाये !

[तर्ज : लावणी खड़ी]

समझो मित्रों ! बहुत कीमती, समय हाथ से जाता है ।
निकल गया सो निकल गया, वह लौट पुनः नहीं आता है ।। टेर ।।

एक किसान चला निज घर से, करे खेत की रखवाली ।
उसने वहाँ पर फिरते देखी, रत्न भरी हांडी काली ।।
धोती में भर लिए रत्न सब, कर दी हाँडी को खाली ।
कूएँ पर आ सोचे इनको, फेकूँ गोफण में डाली ।।
नहीं ढूंढ कर लाना हैं ये, मिले सहज मन लाता है ।।१।। निकल० ।।

एक-एक को रख गोफण में फेंक रहा खुश हो करके ।
खेल खेलता आया बच्चा, माँगा उसने लख करके ।।
समझ खिलौना घर ले आया, उसे जेब में रख करके ।
लगा खेलने तब माँ पूछे, बुला पास बैठा करके ।।
कहो पुत्र ! तू कहाँ से लाया, यह तो खूब चमकता है ।।२।। निकल० ।।

पुत्र कहे मैं पिता पास से, यह कंकर लेकर आया ।
पिता पास में बहुत पड़े है, ऐसे कंकर सुखदाया ।।
मात कहे—यह मुझको दे दे, इसकी जरूरत है भाया ।
और पिता से तू ले लेना, ऐसे सुत को समझाया ।।
बच्चे ने दे दिया मात को, माँ का मन हरसाता है ।।३।। निकल० ।।

लेय चली बाजार बीच में, वह गुड़ लाने के ताँई ।
जा बोली वह दुकानदार से, गुड़ देना मुझको भाई ।।
कितने का गुड़ लेना तुमको, रत्न दिया तिन दिखलाई ।
उसी समय इक आया जौहरी, देख रत्न को हरसाई ।।
लाख रुपये देकर उसको, रत्न लेय घर जाता है ।।४।। निकल०

उधर कृषक सब रत्न फैंक कर, भोजन करने घर आया ।
नारी से सुन मूल्य रत्न का, दिल में अति वह पछताया ।।
ऐसे कीमती रत्न मुझे तो, मिले बहुत पर फेंकाया ।
हा ! मैं मूरख समझहीन बन, लाभ नहीं कुछ ले पाया ।।
चीड़ी उड़ाने में फैंके सब, सोच-सोच घबराता है ।।५।। निकल० ।।

वापिस जाकर खोजा उसने, किन्तु नहीं कुछ मिल पाए ।
पश्चाताप करें अति मन में, पर क्या हो अब पछताए ।।
इसी तरह यह नर आयुष के, रत्न बहुत ही संग लाए ।
किन्तु कृषक सम घर धन्धे में, फेंक समय को खो जाए ।।
गया वक्त अब हाथ न आता, मन में अति पछताता है ।।६।। निकल० ।।

द्रव्य हेतु से समझो बन्धव, यह अवसर नहीं आने का ।
मानव सा यह अमूल्य जीवन, आगे को नहीं पाने का ।।
क्षण-क्षण करके बीत रहा है, वक्त आयगा जाने का ।
'प्राज्ञ' प्रसादे 'सोहन मुनि' कहे, करो कर्म शिव पाने का ।
जो करता स्वाध्याय सदा वह, अमर स्थान को पाता है ।।७।। निकल० ।।

२ | पति हितकारी : सन्नारी

दोहा :—वर्धमान भगवान का, गावो सब गुण गान।
ऋद्धि वृद्धि होवे सदा, पावे जग में मान ॥ १ ॥

[तर्ज—राधेश्याम रामायण]

राजगृह था नगर अनुपम, श्रेणिक नृप था हितकारी।
हेमवन्त भूधर सम शोभा, पाता था वह गुणधारी ॥ १ ॥

महाराणी पटनारी चेलणा, नव तत्वों की थी ज्ञाता।
रग रग में थी श्रद्धा जिनके वीर वचन ही मन भाता ॥ २ ॥

महाराजा थे बौद्ध मती और, क्षणिक वाद था मत जिनका।
क्षण-क्षण में होता परिवर्तन, चेतन का और इस तन का ॥ ३ ॥

जब भी चर्चा होती धर्म की, महाराणी भी रस लेती।
वीर वचन है सत्य जगत में, साफ-साफ वह कह देती ॥ ४ ॥

दोहा :—अकाट्य वचनों को सुनी, होय निरुत्तर भूप।
आगे पीछे सोच कर, हो जाता था चुप्प ॥ २ ॥

इक दिन भूपति कहे देखलो, नगर निवासी सभी सुखी।
यह प्रताप सब ही मेरा है, नहीं नजर में आय दुःखी ॥ ५ ॥

महाराणी कहे जीव शुभाशुभ, किये आप अपने पाये।
नहीं किसी को कोई भी यहाँ, सुख दुःख देने को आये ॥ ६ ॥

महाराज कहे राजनीति ही, सब को साता देती है।
प्रजा मोद से समय निकाले, सुख की सांसे लेती है ॥ ७ ॥

दुःखी नजर में नहीं आ रहा, देखा हो तो बतलावो।
सुखी करुंगा उस मानव को, कहीं अगर तुम खुद पावो ॥ ८ ॥

दोहा :—श्रवण करी पति के वचन, सोचे यों पटनार।
सुख दुःख भोगे निज किये, सुनो आप भरतार ॥ ३ ॥

सुख दुःख देना नहीं हाथ में, प्राणनाथ मत गर्वावो।
जैसे-जैसे बाँधे कर्म वह, भोगे यह मन में लावो ॥ ९ ॥

तभी भवन के नीचे देखा, एक मनुज अति काँप रहा।
रात अंधेरी सिर पर भारी, महाराणी ने त्वरित कहा ॥१०॥

नाथ! देख लो आँखों से यह, मानव नीचे खड़ा रहा।
नहीं वस्त्र पूरे हैं तन पर, तन भी जिसका ठिठुर रहा ॥११॥

वर्षा बरसे जोरों की और, ठंडी वायु चलती है।
चमके बिजली, गर्जे बादल, सरिता पूरी बहती है ॥१२॥

दोहा :—पटराणी के वचन से, नृप को हुआ विचार।
जो जो भी की वारता, देती उत्तर सार ॥४॥

नरनाथ देख विस्मय पाया, यह कैसे यहाँ पर आया है।
कौन दुःखी होगा इससे भी, भूपति मन में लाया है ॥१३॥

तभी दास को हुक्म दिया, ला पकड़ इसे यहां बैठाओ।
प्रातः सभा भवन में इसको, लेकर के तुम आ जाओ ॥१४॥

हुक्म मुनासिब काम किया, ले सभा भवन माँही आया।
क्या चाहते हो मुझे बताओ, महीपति ने फरमाया ॥१५॥

इतना दुख क्यों भोग रहे हो, जो चाहो सो ले जाओ।
कमी नहीं है मेरे राज्य में, इच्छा हो वो ही पाओ ॥१६॥

दोहा :—मुम्मण बोला क्या कहूं, मुझे बैल की चाह।
और नहीं है कामना, सुनो अर्ज नरनाह ॥ ५ ॥

हवलदार से कहा इन्हें तुम, गौ शाला में ले जाओ।
जैसा चाहे बैल इन्हें दे, अपने घर पर पहुंचाओ ॥१७॥

सब वृषभों को देख चुका पर, नहीं पसंद कोई आया।
पुनः लौटकर सभा बीच में, भूपति को सब दरसाया ॥१८॥

मुम्मण बोला जैसा चाहे, वैसा इनमें नहीं पावे।
भूप कहे तुम कैसा चाहते, साफ बोलकर दरसावें ॥१९॥

ना खावे ना पिये रात दिन, खड़ा रहे वैसा चावे।
सुनकर उसकी बात भूपति, मन में अति विस्मय पावे ॥२०॥

दोहा :—कैसा इसका बैल है, मैं भी देखूं जाय।
भूपति ने यों सोचकर, लीना अभय बुलाय ॥ ६ ॥

बना सवारी बड़े ठाठ से, नगर बीच होकर जावे।
भूपति उसका भवन देखकर, मन में अति विस्मय पावे ॥२१॥

ले गया जहाँ पर रत्न जड़ित, बैलो की जोड़ी खड़ी हुई।
जगमग ज्योति फैल रही है, अखूट लक्ष्मी पड़ी हुई ।।२२।।

इतनी लक्ष्मी का स्वामी भी, कितना कष्ट उठाता है।
अर्थ दुःख किंचित भी है ना, मन से दुःख यह पाता है ।।२३।।

मन का कष्ट मिटा नहीं सकता, राणी सत्य सुनाती है।
मान मेरा मिथ्या है सारा, यही भावना आती है ।।२४।।

दोहा :—पुनः लौटकर आ गया, भूपति अपने स्थान।
समय-समय पर चेलणा, देवे इनको ज्ञान ।। ७ ।।

एक दिवस आये घूमन को, मंडिकुक्ष बाग में महाराजा।
वहाँ अनाथी मुनि को लख, आकृष्ट हो गये महाराजा ।।२५।।

उत्तराध्ययन में वर्णन है, नरपति ने समकित पायी थी।
मुनिवर का जीवन सुन करके, निज जीवन ज्योति जगायी थी ।।२६।।

होंगे ये तीर्थंकर पहले, उत्सर्पिणी काल के आरे में।
कैसी थी वह राणी चेलना, क्या कहें उसके बारे में ।।२७।।

धार्मिक चर्चा करके उसने, पति के मन को मोड़ दिया।
उलझ रहे थे असत्य पथ में, सत्य मार्ग में जोड़ लिया ।।२८।।

दोहा :—कितना उसमें ज्ञान था, दीनी राह बताय।
भटके पति को मोक्ष का, दीना पथिक बनाय ।। ८ ।।

पूर्व पुण्य हो पूर्ण साथ में, तभी मिले ऐसी नारी।
धर्म मार्ग से गिरते पति को, करे धर्म का अधिकारी ।।२९।।

दुर्व्यसनों में उलझे पति को, प्रेम सहित दे सुलझाई।
कभी नरम तो कभी गरम बन, देवें उनको समझाई ।।३०।।

पति हित में यदि निज हित मानें, आर्य देश की सन्नारी।
तो आफत को सहकर भी वह, रक्षा करती हर वारी ।।३१।।

'प्राज्ञ प्रसादे' 'सोहन मुनि' कहे, सुकृत सम्बल संग ले लो।
मन चाहा पाओगे आगे, जिनवाणी धारण करलो ।।३२।।

दोहा :—दो हजार इकतीस का, माधव कृष्णा एक।
टांटोटी के श्रावकों !, रखो सत्य की टेक ।। ९ ।।

३ मान से बढ़ जावे संसार

[तर्ज—नेम जी की जान बणी भारी]

मान से जीवन जावे हार, मान से बढ़ जावे संसार ।। टेर ।।
करो मत मान कोई भाई, मान से हानी बतलाई ।
मान है जग में दुखदाई, अन्त में मानी पछताई ।।
दोहा :—कथा कहूं इस विषय पे, सुनो लगा कर ध्यान ।
जिसने मान किया दुख पाया, चाहे होय महान् ।।
बात यह लीज्यो हिरदय धार ।। मान० ।। १ ।।

कौशाम्बी नगरी सुखकारी, प्रजापति 'प्रजानाथ' भारी ।
राज में मन्त्री मति धारी, सुखी है प्रजा वहाँ सारी ।।
दोहा :—बसे एक विद्वान वहाँ, ज्योतिष में हुशियार ।
तीन काल की बात सुनाता, जो है होवन हार ।।
फैल रही शोभा घर घर द्वार ।। मान० ।। २ ।।

एक दिन भूप बात जानी, बुलाऊँ मन में यों ठानी ।
मंत्री को कीनी नृप शानी, बुला लिया उसको सम्मानी ।।
दोहा :—सभा भवन में ज्योतिषी, देखी निज सम्मान ।
मेरे पास में कैसा इल्म है, मन में आया मान ।।
भूप से बोला यों इस बार ।। मान० ।। ३ ।।

पूछ लो जो मन में आवे, प्रश्न का उत्तर झट पावे ।
फरक नहीं रत्ती भर पावे, भूप तब ऐसे दरसावे ।।
दोहा :—मेरे भवन के हैं सभी, पूरे बारह द्वार ।
मैं किससे बाहर निकलूंगा, कह दो अभी विचार ।।
पता लग जावेगा तत्काल ।। मान० ।। ४ ।।

गणित कर फलित लिख दीना, लिफाफा बंद कर लीना ।
भूप के हाथ मांय दीना, पत्र को नृप ने ले लीना ।।

दोहा :—भूपति अपने भवन में, बना तेरहवाँ द्वार।
बाहर निकलकर देखे कागज, लिखा उसी प्रकार।।
देखकर विस्मय हुआ अपार।। मान०।। ५।।

भूप के दिल माँही आई, गुप्त कोई करे मंत्रणा ही।
जान ले ज्योतिष के तांई, भेद सब चौड़े हो जाई।।
दोहा :—मंत्री को बुलवाय के, दीना यों आदेश।
सात मंजिल से नीचे गेरो करो न देरी लेश।।
बहस में नहीं है कुछ भी सार।। मान०।। ६।।

मन्त्री ने युक्ति यों कीनी, भूमि पर रुई बिछा दीनी।
जोशी की जान बजा लीनी, आज्ञा भी पार लगा दीनी।।
दोहा :—चंद दिनों के बाद ही, नृप को हुआ विचार।
जोशी को मरवा कर मैंनें, किया अनर्थ अपार।।
मंत्री से कहता बारम्वार।। मान०।। ७।।

समय लख उसे प्रकट कीना, भूप ने सम्मानित कीना।
भेद मंत्री ने कह दीना, धन्य नृप मंत्री को दीना।।
दोहा—भूपति पूछे क्या यही लिखी पत्रिका माँय।
तभी जन्म पत्री को दिखला अपनी वात सुनाय।।
प्रजापति बोले यों इस वार।। मान०।। ८।।

ज्ञानी वन मान नहीं करना, इसी से होता है गिरना।
भूल स्वीकार नियम कीना, मान नहीं करूं जाव जीना।।
दोहा :—'प्राज्ञ' शिष्य 'सोहन' कहे, मान किया हो हान।
अतः सदा यह रखो ध्यान में ज्ञानी जन फरमान।।
मान तज सरल वनो नरनार।। मान०।। ९।।

श्लोक :—अभिमानं सुरापानं, गौरवं घोर रौरवं।
प्रतिष्ठां शूकरीविष्ठां त्रीणि त्यक्त्वा सुखी भवेत्।।

अर्थ :—व्यक्ति अभिमान को सुरापान की तरह एवं गौरव को घोर नरक के दुःख की भांति साथ ही प्रतिष्ठा को सूअरी की विष्ठा समझ कर इन तीनों का परित्याग कर देता है तभी सुखी जीवन जीता है।

४ | सुपने सा संसार

[तर्ज—यह गढ़ चित्तौड़ की कथा]

संसार स्वप्न सम जान अरे तू प्राणी, है चन्द समय का वास सुनावे ज्ञानी ।। टेर ।।

निद्रा का सुपना आंख खुली मिट जावे, जीवन का सुपना आँख मींची बिरलावे ।
धन धाम और परिवार नजर जो आवे, सबको ही यहाँ पर छोड़ अकेला जावे ।।
फिर भी तो इतना गहरा पचे अज्ञानी ।। है० १ ।।

एक राज-सवारी देख भिखारी वन में, जा तरु छाया में बैठ सोचता मन में ।
ले लूँ थोड़ी नींद आलस है तन में, यों सोच सो गया देखन लगा सुपन में ।।
बन गया भूप वह, करे केई अगवानी ।। है० २ ।।

निजराणा आ रहा चारों ओर से भारी, चारण करते गुणगान होय जयकारी ।
रहते सेवा में दासी दास हर बारी, भोगे वह नूतन भोग सदा सुखकारी ।।
कमी नहीं कुछ, मिले वस्तु मन मांनी ।। है० ३ ।।

इक दिवस भूप ने आज्ञा यों फरमाई, ले जावें राज से वस्तु हो मन चाई ।
जागीरी करे बक्षीस खूब हरषाई, पट्टे कर दीने केई स्वयं लिखवाई ।।
धन्य कहे सब लोग, न इनका सानी ।। है० ४ ।।

खोल दिया भंडार खूब धन देवे, जिनके जो होवे चाह वही आ लेवे ;
स्थान-स्थान पर भोजन शाल बनावे, मिले खूब भरपेट अन्न सुख पावे ।।
हो रहा जगत में नाम है कैसा दानी ।। है० ५ ।।

इत सभा भवन में केई भूपति आवे, नामांकित अपना स्थान देख जम जावे ।
नमे सभी नृप, एक न शीश नमावे, यह देख भूपती क्रोध वचन फरमावे ।।
तू नमन क्यों नहीं करता रे अभिमानी ।। है० ६ ।।

आपस में बढ़ गई बात खड्ग ले लीनी, तुम आकर सन्मुख युद्ध करो कह दीनी ।
हो गये दोऊ तैयार कमर कस लीनी, अब चमक रही तलवार तेज रंग भीनी ।।
हिल गया हाथ, मिट गया खेल सुखदानी ।। है० ७ ।।

जब खुली आँख तब कोई नजर नहीं आवे, कहाँ गया वह राज्य कोप मन लावे ।
क्षुधा लगी है खाली पेट लखावे, सिरहाणे रखा खप्पर कर में आवे ।।
मौज गयी सब दशा हुई दुखदानी ।। है० ८ ।।

क्यों ऐसे तू संसार बीच भरमावे, ले समझ जरा क्या तेरे साथ में जावे ।
उलझ रहा भव कीच बीच दुख पावे, कर धर्म ध्यान तू सदा शांति निज चावे ।।
'सोहन मुनि' कहे चेत, छोड़ नादानी ।। है० ९ ।।

५ | श्रावक : सच्चे मायत हैं

[तर्ज : लावणी खड़ी]

ज्ञानवान गुणवान श्राद्ध थे, सरल बुद्धि थे श्रद्धावान।
जिन वचनों से डिगे हुए को स्थिर कर देते थे मतिमान ॥ टेर ॥
गणिवर वसु के शिष्य 'तिष्य जी' पूर्वों की कर रहे स्वाध्याय,
आत्म प्रवाद पूर्व में देखा गुरु शिष्य का है समवाय।
प्रश्न पूँछता शिष्य गुरु से जीव एक प्रदेशी कहाय,
भगवन् बोले—नहीं ! तभी फिर प्रश्न दिया है अग्र चलाय।
दोय, तीन, संख्यात, प्रदेशी होती आत्मा क्या भगवान् ॥ १ ॥
नहीं कहा, तब पूछे एक कम, असंख्य प्रदेशी कहलावे,
जितने भी हों प्रदेश जीव के उतने पूरे वह पावे।
अन्त्य प्रदेश ही जीव कहाता यही बुद्धि में ठस जावे,
अतः जीव है एक प्रदेशी ऐसा अर्थ मन में लावे।
गुरु समझावे नहीं समझा तब गच्छ बाहर कीना फरमान ॥ २ ॥
एक वक्त वह आया घूमता आमलकल्पा नगरी माँय,
श्रावक सुमित्र के घर गये गोचरी दीनी श्रावक ने बहराय।
दाल चांवल का एक-एक दाना रख दीना है पात्तर माँय,
देख मुनि कहे हँसी क्यों करते आई आपके क्या दिल माँय।
नहीं नहीं मैं हँसी न करता समझो आप हो चतुर सुजान ॥ ३ ॥
एक प्रदेशी आत्म, अवगाहणा अंगुल के असंख्याते भाग,
इन दानों की ओगाहणा है अंगुल के संख्याते भाग।
यह आहार तो है आत्मा से असंख्यात गुणा महाभाग,
अतः आहार नहीं कम होगा सुन मुनिवर गये तत्क्षण जाग।
युक्ति श्राद्ध की काम दे गई, लीनी मुनि ने सच्ची मान ॥ ४ ॥
श्रद्धा शुद्ध हुई मुनि बोले किया आपने महा उपकार,
भटक गया था जिन वचनों से पुनः दिया है राह में डार।
श्रावक बोला धन्य आपको करी बात सच्ची स्वीकार,
'प्राज्ञ' प्रसादे 'सोहन मुनि' कहे, कैसे श्रावक थे हुशियार।
स्वाध्याय के थे अभ्यासी तभी उन्हें था इतना ज्ञान ॥ ५ ॥

६

वचन : अमृत भी, विष भी

[तर्ज : नेमजी की जान बणी भारी]

वचन के वश हो नर नारी। वचन की महिमा है भारी ॥ टेर ॥

वचन से कष्ट मिटे सारा, वहा दे सब में प्रेम धारा।
बने वह जग मोहनगारा, बताऊँ मंत्र यही प्यारा ॥
दोहा :—अन्य जगह क्यों ढूंढता, है खुद के ही पास।
खोज करे तो वेग मिले वह, हो दिल में विश्वास ॥
कहूंगा जो हो हितकारी ॥ १ ॥

कला यह जो कोई जाने, उसी को सब जन सन्माने।
बात भी जग उसकी मानें, उत्तम नर उसको पहचाने ॥
दोहा :—कीमत जग में वचन की, बोल सके तो बोल।
पहले उसको तोल हृदय में, फिर मुख से तू खोल ॥
उसी में शोभा है थाँरी ॥ २ ॥

गांव में बन्धव दो रहते, गरीबी गहरी वे सहते।
दु:ख जा नहीं कि कहते, सदा कुल लीक माँहि वहते ॥
दोहा :—दोनों भाई सोचते, नहीं फैलावें हाथ।
परिश्रम करके पेट भरेंगे, भाग्य हमारे साथ ॥
बात यह दिल माँही धारी ॥ ३ ॥

हमेशा गाँवों में जावे, वजन वे खूब उठा लावे।
एक दिन दोनों घबरावे, प्यास से जिवड़ा दु:ख पावे ॥
दोहा :—भ्रात भ्रात से कह रहा, चला नहीं अब जाय।
अतः यहाँ सामान सभी रख, जावें ग्राम के माँय ॥
शीघ्र ही पी आवें वारी ॥ ४ ॥

गया है प्रथम बड़ा भाई, देख रहा कूप पास आई।
नारियाँ रही हैं घबराई, पानी नहीं आवे कूप माँही ॥
दोहा :—चुल्लू चुल्लू ले रही, भरे नहीं घट एक।
देख व्यवस्था लौट रहा तब वृद्धा रही थी देख ॥
जाओ क्यों ? बात कहो सारी ॥ ५ ॥

मांजी सा पानी हित आया, हाल लख जिवड़ा दुख पाया।
कष्ट ना दूँ मन में लाया, बात कह निज की समझाया ॥
दोहा :—ठहरो कह कर के गई शीतल पानी लाय।
जल का लोटा दिया हाथ में, प्रेम से रही पिलाय ॥
तृप्त हुआ पीकर के वारी ॥ ६ ॥

पुनः चल भ्रात पास आया, बात कहें उसको समझाया।
मांजी सा कहिजे बतलाया, राह में शब्द बिसराया ॥
दोहा :—पनघट पर लख औरतें मुख से बोला एम।
म्हारा बाप की सभी लुगायाँ, और कहूं मैं केम ॥
पिलावो पानी इसबारी ॥ ७ ॥

सुनी यह शब्द पकड़ लीना, जोर का दण्ड उसे दीना।
कहे वह मैंने क्या कीना, खोल दो कठिन मेरा जीना ॥
दोहा—दोय घड़ी तक भ्रात की, कीनी है इन्तजार।
नहीं आया तब उठ चला, वह सोचे हृदय मंझार ॥
वक्त क्यों इतनी नीकारी ॥ ८ ॥

भ्रात को बन्धन में पाया, स्त्रियों से भेद सभी पाया।
वचन का ज्ञान नहीं आया, इसी से यहाँ मार खाया ॥
दोहा :—मिष्ठ वचन से भ्रात को, दीना मुक्त कराय।
पानी पिलाकर सद्य वहाँ से, अपने स्थान सिधाय ॥
कहे क्यों दुर्गति हुई थाँरी ॥ ९ ॥

जीभ पर रस विष दोऊँ रहते, ज्ञानी जन बात सत्य कहते।
वचन विष बोल दुःख सहते, गुणी जन रस रंग में बहते ॥
दोहा :—'प्राज्ञ' शिष्य 'सोहन' कहे, बोलो वचन विचार।
कटुक वचन नहीं कहें कभी हम, लेओ प्रतिज्ञा धार ॥
जिन्दगी सुधर जाय थाँरी ॥१०॥

७ | काल बड़ा बलवान

[तर्ज : तावड़ो धीमों तो पड़ जारे]

काल से वड़े वड़े हारे जी, काल से वड़े बड़े हारे ।
होकर के इस आगे पंगु चले गये सारे ।। टेर ।।

सुर, सुरेन्द्र, नर, नरपति जग में, अति बलवान कहाय-सज्जनों-
तीतर वाज ज्यूँ मार झपट्टा पकड़ उन्हें ले जाय ।। काल० ।। १ ।।
एक वड़े सम्राट एक दिन, अन्तःपुर में आय-सज्जनों-
दर्पण में लख आनन मन में, गहरी चिंता छाय ।। काल० ।। २ ।।
महारानी सोचे क्यों चेहरा, खिला हुआ कुम्हलाय-नाथ का-
पूछ अभी मैं निर्णय ले लूँ पता मुझे लग जाय ।। काल० ।। ३ ।।
कर जोड़ी अरजी यों कीनी, आप देवो फरमाय-नाथ जी-
विकसित चेहरा कैसे आपका गया अभी मुरझाय ।। काल० ।। ४ ।।

दोहा :—भोजन थाल आगे धरा, दिया पान भी हाथ ।
जगमग ज्योति जल रही, कैसे उदासी नाथ ।।

वात क्या तुम्हें कहूं प्यारी जी, वात क्या तुम्हें कहूं प्यारी ।
मन की मन में रह जावेगी जो मन में धारी ।। टेर ।।

शत्रु दूत संदेश दे रहा, आवे असवारी-राणी जी-
वही वाँध ले जाये मुझको लगे नहीं कारी ।। काल० ।। ५ ।।
सुनकर राणी कहे आपसे नहीं कोई वलवान्-नाथ जी-
गर्व धरी ने आया वो ही गिरा चरण दरम्यान ।। काल० ।। ६ ।।
उसके आगे नहीं चलेगी, कोई हुशियारी-राणी जी-
छल वल करके आवे अचानक लेवे वह मारी ।। काल० ।। ७ ।।
संधि करके जवर शत्रु से झगड़ा दूँ मिटवाय-नाथ जी-
अथवा रिश्वत देकर उसको लेऊंगी समझाय ।। काल० ।। ८ ।।
रिश्वत वह नहीं लेवे हरगिज कहूं तुझे प्यारी-राणी जी-
लोक सभी आधीन उसी के जितने देह धारी ।। काल० ।। ९ ।।

ऐसा कौन है बली जगत में आप नाम फरमाय-नाथ जी-
मेरी नजर में कभी न आया देखन को चित्त चाय ।। काल०।। ११ ।।

काल स्वामी का दूत श्वेतकच[1], दे रहा यों आवाज-राणी जी-
चेत चेत ओ चेत चतुर नर सुधर जायगा काज ।। काल०।। ११ ।।

स्वामी आये बाद तुम्हारा, नहीं तन पर अधिकार-राणी जी-
धरा, धाम, धन सभी छीन ले नंगा काढ़े बा'र ।। काल०।। १२ ।।

अतः दान कर ईश भजन की, पूंजी ले लो लार-राणी जी-
जहां जावेंगे यही सम्पति सुख देगी हर बार ।। काल०।। १३ ।।

सुनकर समझ गई महाराणी, काल शत्रु बलवान-सज्जनों-
सत्य नाथ फरमान आपका सदा भजें भगवान ।। काल०।। १४ ।।

'प्राज्ञ' प्रसादे 'सोहन' मुनि कहे, सदा रहो हुशियार-सज्जनों-
आलस तज कर कर्म काट लो काल जायगा हार ।। काल०।। १५ ।।

दो हजार इकतीस जेठ बुद, दशमी है गुरुवार-सज्जनों-
अजमेर शहर में जोड़ बनाकर कर लीनी तैयार ।। काल०।। १६ ।।

---

१. सफेद केश

८ माता का उपकार : अनन्त अपार

[तर्ज—कोरो काजलियो ....]

कुछ मन में करो विचार, श्रोता सुण लीज्यो।
है मायत को उपकार, दिल में धर लीज्यो ॥ टेर ॥

सम्पत्ति पा फूलो मती, है चन्द समय की बहार ॥ श्रोता०॥
फूला सो कुम्हलायगा, यह लीज्यो हिरदय धार ॥ दिल० ॥ १ ॥
वृद्धा ने निज पुत्र को, किया पढ़ा लिखा हुशियार ॥ श्रोता०॥
वकालात करने लगा वह, उस ही शहर मंझार ॥ दिल० ॥ २ ॥
प्रेक्टिस अच्छी चल रही, कोई माने सब संसार ॥ श्रोता०॥
पाणिग्रहण कर लावियो, फैशनेबुल घर नार ॥ दिल० ॥ ३ ॥
दम्पति रहते मोद में, अब भूला माँ का प्यार ॥ श्रोता०॥
अलग कक्ष में रख कहा—खा पका तू रोटी दार ॥ दिल० ॥ ४ ॥
अन्तर में वृद्धा दुखी, अब सुनता कौन पुकार ॥ श्रोता०॥
तौल तौल देने लगा, नहीं लेता सार संभार ॥ दिल० ॥ ५ ॥
आय बढ़ी, फैशन बढ़ी, नित करते मौज अपार ॥ श्रोता०॥
रोज सिनेमा देखने, वे जावे टाकीज मंझार ॥ दिल० ॥ ६ ॥
एक दिन भाई आ गया, भगिनी को लेने द्वार ॥ श्रोता०॥
पीहर माँही जा रही, वह पति आज्ञा शिरधार ॥ दिल० ॥ ७ ॥
मिल मालिक मजदूर के, आपस में हुई तकरार ॥ श्रोता०॥
पंच बना उस वकील को, ले गये वे अपनी लार ॥ दिल० ॥ ८ ॥
अर्ध रात तक नहीं आया, माँ बैठी करे इन्तजार ॥ श्रोता०॥
शंका मन में हो रही, क्या कारण है इस वार ॥ दिल० ॥ ९ ॥
इतने में वह आ गया, माता का देखा हाल ॥ श्रोता०॥
पूछे क्या है मात जी, सुन बोली यों तत्काल ॥ दिल० ॥१०॥
मेरा मन तुझ में बसा, तू क्यों नहीं आया लाल ॥ श्रोता०॥
घबराहट दिल में बढ़ी, तुझे देख हुई निहाल ॥ दिल० ॥११॥
अब सोऊंगी मोद से, हुई मन में शान्ति अपार ॥ श्रोता०॥
मां की बात सुनकर गया, वह सोचत शयनागार ॥ दिल० ॥१२॥

नींद न आई सोचता, है मां का कितना प्यार ।। श्रोता०।।
याद करी सब बात को, है मुझ पर अति उपकार ।। दिल० ।।१३।।
कष्ट सही मेरे लिये, यह देती पुष्ट आहार ।। श्रोता०।।
उसका बदला इस तरह, है मुझे कोटि धिक्कार ।। दिल० ।।१४।।
मात पास आ देखता, वह जाप जपे नवकार ।। श्रोता०।।
जाग्रत लख पूछे तदा, माताजी कहे विचार ।। दिल० ।।१५।।
आया नहीं तू लौट के, तब करी प्रभु से पुकार ।। श्रोता०।।
सानंद आवे तो जपूँ मैं पाँच माला इस बार ।। दिल० ।।१६।।
यह सुनते ही मात के, वह पुत्र गिरा चरणार ।। श्रोता०।।
फूट फूट रोने लगा, है मुझे कोटि धिक्कार ।। दिल० ।।१७।।
क्षमा करो अपराध को, अब मैं हूं ताबेदार[1] ।। श्रोता०।।
नहीं बोली तब तक रहा, सिर झुका मात चरणार ।। दिल० ।।१८।।
मात कहे तेरे लिये, है मन में क्षमा अपार ।। श्रोता०।।
संतति के प्रति मात का, होता है कितना प्यार ।। दिल० ।।१९।।
माता अब मैं आज से, यह लेऊँ प्रतिज्ञा धार ।। श्रोता०।।
तुझ आज्ञा में चालूँगा, लोपूँगा नहीं मैं कार ।। दिल० ।।२०।।
रंग ढंग सब बदल गये, आ देखा घर की नार ।। श्रोता०।।
माँ की आज्ञा में रहो, यों बोला पति फटकार ।। दिल० ।।२१।।
नहीं तो वो ही कोटड़ी, है तेरे लिये तैयार ।। श्रोता०।।
सुनकर पति की बात को, अब सरल हो गई नार ।। दिल० ।।२२।।
स्वर्ग तुल्य घर हो गया, कोई मिटा सभी जंजाल ।। श्रोता०।।
प्रातः उठकर दम्पती, नित नमें मात चरणार ।। दिल० ।।२३।।
शुध मन सेवा हो रही, और चलते आज्ञानुसार ।। श्रोता०।।
माँ के शुभ आशीष से, वे सुखी बने नर नार ।। दिल० ।।२४।।
यह तन उनसे ही बना, तुम भूलो मत उपकार ।। श्रोता०।।
'प्राज्ञ' शिष्य 'सोहन' मुनि यों कहता बारम्बार ।। दिल० ।।२५।।
विक्रम संवत् तीस में, देवलिया कलाँ मझार ।। श्रोता०।।
फागुन मास बुध तीज को, यह रचा कथन सुखकार ।। दिल० ।।२६।।

१. सेवक

९ | नियम की दृढ़ता

[तर्ज : द्रोण की]

लिये नियम जो शुद्ध भावों से पाले, महाराज-कष्ट सब ही मिट जावे जी।
सुख सम्पति आनंद सहज सन्मुख ही पावे जी ।। टेर ।।

चतुर सेन महाराज कौशाम्बी नगरी, महाराज-मंत्री गुणसागर नामी जी।
राज काज में दक्ष, नहीं है कुछ भी खामी जी।
श्रावक व्रत स्वीकार मास इक माँही-महाराज-पौषध भी छह छह करता जी।
भ्रष्टाचार से दूर, आय नीति की करता जी।
ना चले किसी का दाव, जले सब मन में-महाराज-भ्रष्ट जन चुगली खावे जी। सुख०। १

चतुर्दशी दिन पौषध करने जावे-महाराज-स्थानक में सद्गुरु बिराजे जी।
वंदन कर पौषध व्रत को लीना आतम काजे जी।
उस वक्त भूप कहे मंत्री कहाँ बैठा है-महाराज-उसे लो त्वरित बुलाई जी।
गया संतरी दौड़ मंत्री को दिया सुनाई जी।
कहे मंत्री जा कहो आज नहीं आवे-महाराज-ध्यान जिनवर का ध्यावे जी। सुख०। २

वापिस आकर कही संतरी सारी-महाराज-भूप सुनकर फरमावे जी।
रोटी मेरी खाय और जिनवर गुण गावे जी।
दो तीन वक्त दिया भेज मिला वही उत्तर-महाराज-क्रोध कर नृप फरमावे जी।
कहो उसे जा मंत्री चिन्ह भूपति मंगवावे जी।
नापित को भेजा मंत्री पास से लाओ-महाराज-नापित दिल में हरसावे जी। सुख०। ३।

मन्त्री सुनकर बात उसी क्षण दीना-महाराज-धर्म में बाधक जाना जी।
अब करूं खूब गुरुदेव सेव मन में यह ठाना जी।
नापित लेकर आते मार्ग में सोचे-महाराज-करूँ आनंद मन माना जी।
दो चार घड़ी रख पास मोद में समय बिताना जी।
लगा चिन्ह को सदर बाजारे आया-महाराज-लोक लख अचरज पावे जी। सुख०। ४।

नापित कहता नृप ने खुश हो दीना-महाराज-सुनी जन आदर देवे जी।
पान सुपारी भेंट देय हो हर्षित लेवे जी।
जो कर्मचारी नित मंत्री पर जलते थे-महाराज-परस्पर-मिल कर ठाने जी।
रिश्वत में बाधक रहे इसे मरवादें छाने जी।
करके सबने सलाह वधक बुलवाया-महाराज-उसे ऐसा समझावे जी। सुख०। ५।

मंत्री पद का चिन्ह देख लो जिसके-महाराज- उसे झट मार गिराना जी।
नहीं करना कुछ भी सोच वहाँ से झट भग जाना जी।
लेकर उन से दाम बजार में आया-महाराज-पूछ कर पता लगाया जी।
घर में घूमते समय मंत्री को मार गिराया जी।
भग गया मार कर हाथ नहीं वह आया-महाराज-लोग हाकार मचावे जी। सुख०। ६।

हो गये इकट्ठे लोग हजारों वहाँ पर-महाराज-नगर रक्षक भी आया जी।
दिन दहाड़े देख लाश वह अचरज पाया जी।
होऊँगा बदनाम भूप के आगे-महाराज-प्रजा का भय है भारी जी।
उस समय किसी ने भूप पास जा कह दी सारी जी।
मंत्री मरने की बात सुनी जब नृप ने-महाराज-महीपति अति दुख पावे जी। सुख०। ७।

अब हो रही चर्चा सारे नगर में ऐसे-महाराज-पूर्व मंत्री मरवाया जी।
ले कोई किसी का नाम, कोई किसका बतलाया जी।
कोतवाल को नृप आदेश सुनाया-महाराज-हत्यारा हाजिर कीजे जी।
नहीं तो वैसा दंड आप खुद ही ले लीजे जी।
कोतवाल भी चोर ढूंढ कर लाया-महाराज-भूप लख हुक्म सुनावे जी। सुख०। ८।

भय के मारे सभी भेद नृप आगे-महाराज-चोर ने ही कह दीना जी।
अन्यायी है कर्मचारी मिल अनरथ कीना जी।
गुण सागर मंत्री न्याय नीति से चलता-महाराज-राज का है रखवाला जी।
बहका मुझको इन लोगों ने भ्रम में डाला जी।
पुनः जाय मंत्री पद उनको दे दूँ-महाराज-सद्य स्थानक में जावे जी। सुख०। ९।

कर वंदन गुरु को मंत्री से यों कहता-महाराज-छाप अपनी संभालो जी।
वेतन दुगुना किया आज से व्रत शुद्ध पालो जी।
नहीं होगी बाधा धर्म क्रिया में तुमको-महाराज-किया पूरा अधिकारी जी।
मैं भी पालूँ जैनधर्म यह दिल में धारी जी।
यों कह कर भूपति आया राज के माँही-महाराज-चोर को सजा सुनावे जी। सुख०।१०।

आजीवन है कैद किया फल पावे-महाराज-कर्मचारी बुलवाये जी।
सच्चा-सच्चा हाल कहो क्यों ईर्ष्या लाये जी।
सुनकर उनकी बात निर्वासित कीना-महाराज-राज्य में कहीं न रहना जी।
भ्रष्ट हुए निज स्थान छोड़ हुआ अघ[1] का फलना जी।
करो कभी मत किसी साथ में खोटा-महाराज-जीव दुर्गति में जावे जी। सुख०।११।

१- पाप

मंत्री का सन्मान वढ़ा है भारी-महाराज-आज्ञा अव इसकी चाले जी।
कर्मचारी गरण भ्रष्टाचार तज काम संभाले जी।
महीपति अव नित सत्संगत करता-महाराज-धर्म का पथ अपनावे जी।
पाकर वोधि वीज त्याग वह खूब बढ़ावे जी।
एक समय पधारे धर्म घोष मुनिराया-महाराज-भव्य जन मन हरसावे जी। सुख० ।१२।

लेकर सेना साथ मुनि पद वंदे-महाराज-दर्शकर नृप सुख पाया जी।
वाणी सुन, तज राज, संयम ले स्वर्ग सिधाया जी।
मन्त्री भी व्रत पाल जीवन शुद्ध कीना-महाराज-अमर पद को ले लीना जी।
होगा भव से पार, धार जिनवर का शरणा जी।
'प्राज्ञ' प्रसादे 'सोहन मुनि' यों कहता-महाराज-नियम दृढ़ पार लगावे जी। सुख० ।१३

१० | मानव जीवन और तीन वणिक

[तर्ज : आव-आव म्हारा कृष्ण ......]

मान मान मत खोवे ऊमर संत सुनावे रे,
चेतन मान रे ।। टेर ।।

चार गति के चौराहे पर गफलत में क्यों सोवे रे ।
अशुभ कर्म का संग्रह कर क्यों दुखिया होवे रे ।। मान० ।। १ ।।

शुभ कर्मों से ऊंची गति पा जीवन सफल बनावे रे ।
सुनो इसी पर हेतु एक ज्ञानी फरमावे रे ।। मान० ।। २ ।।

तीन वणिक् ले घर से सम्पत्ति परदेसां में जावे रे ।
अलग-अलग होकर के वहाँ व्यापार चलावे रे ।। मान० ।। ३ ।।

पहला सोचे पूंजी पास में खावें मौज उड़ावें रे ।
करे ऐश आराम व्यर्थ क्यों कष्ट उठावें रे ।। मान० ।। ४ ।।

नित प्रति बाग बगीचे में जा माल मसाले खावे रे ।
यार दोस्त के साथ-साथ रह मोद मनावे रे ।। मान० ।। ५ ।।

चंद समय पश्चात् पूंजी गई कर्जा सिर पर छावे रे ।
मिले नहीं टाईम पर खाना दुःख अति पावे रे ।। मान० ।। ६ ।।

द्वितीय वणिक व्यापार करे पैसा भी ठीक कमावे रे ।
किन्तु सभी कमाई को वह वहीं खा जावे रे ।। मान० ।। ७ ।।

मूल पूंजी सुरक्षित रक्खे, कोड़ी नहीं गमावे रे ।
सोच समझ कर काम करे वो नहीं ठगावे रे ।। मान० ।। ८ ।।

वणिक तीसरा करे हाट व्यापार से लाभ कमावे रे ।
कई गुणी पूंजी कर लीनी अति सुख पावे रे ।। मान० ।। ९ ।।

बाजार माँय सम्मान पा रहा सब जन पूछन आवे रे ।
घर में मंगल महोत्सव होवे मोद मनावे रे ।। मान० ।।१०।।

तीनों वणिक सोचे यों दिल में, वापिस निज घर जावे रे ।
प्रथम वणिक निज करणी से मन में पछतावे रे ।। मान० ।।११।।

कर्जा लेकर आया घर पर सब ही जन दुत्कारे रे।
माल गँवा हो दरिद्र वापिस निज घर आवे रे ॥ मान० ॥१२॥

सुन कर के जन-जन की वाणी दिल में अति शरमावे रे।
नहीं समय पर चेत सका आखिर पछतावे रे ॥ मान० ॥१३॥

द्वितीय वणिक निज पूंजी लेकर पुनः स्थान पर आवे रे।
वहीं कमाया वहीं पर खाया लोग सुनावे रे ॥ मान० ॥१४॥

पहले से यह अच्छा है जो मूल सुरक्षित लावे रे।
नहीं घटावे, नहीं बढ़ावे नहीं गमावें रे ॥ मान० ॥१५॥

वणिक तीसरा कई गुणा धन अपने संग में लावे रे।
लोग देखकर करे प्रशंसा गुण मुख गावे रे ॥ मान० ॥१६॥

खूब देय सम्मान उसे घर आनंद से पहुंचावे रे।
जितना धन ले गया उसे कई गुणा बढ़ावे रे ॥ मान० ॥१७॥

तीन वणिक सम है संसारी पुण्य पूंजी संग लावे रे।
कोई गँवावे, कोई सम राखे, कोई बढ़ावे रे ॥ मान० ॥१८॥

गँवा गया वह नर्क निगोदे, अनंत काल दुःख पावे रे।
पुण्य बराबर रक्खा वो ही नर तन पावे रे ॥ मान० ॥१९॥

वृद्धि कर ले जावे उसको ऊंची गति मिल जावे रे।
सुनकर दिल में धारो मित्रों ! जो सुख चावे रे ॥ मान० ॥२०॥

'प्राज्ञ' प्रसादे 'सोहन मुनि' यों बार-बार चेतावे रे।
करो धर्म आराधन जिससे दुःख मिट जावे रे ॥ मान० ॥२१॥

□□

११ | गुरु ही तारणहार

दोहा :—चातुर्मास पूरा किया, आगे पुष्कर माँय।
गऊघाट पर धर्म का, वचनामृत बरसाय ॥ १ ॥
जैन अजैन सब आबिया, सभा भरी गुलजार।
विषय अहिंसा ऊपरे, बही ज्ञान की धार ॥ २ ॥

[तर्ज : नेमजी की जान बणी भारी]

पूज्य गुरु पन्ना अवतारी, जगत में महिमा विस्तारी ॥ टेर ॥

धर्म को चहुं दिशि फैलाया, धर्म का डंका बजवाया।
विचर कर पुष्कर जी आया, ज्ञान सुन पंडा उकसाया ॥
दोहा :—अठै काँई उपदेश द्यो, जावो गनेड़ा माँय।
गहलोत रावत देवी के नित, पाड़ा रहे चढ़ाय ॥
खूब ही चल रही दुधारी ॥ १ ॥

हृदय में जोश चढ़ा भारी, गनेड़ा आ गये उस बारी।
ज्ञान से समझाया भारी, लगी नहीं एक रती कारी ॥
दोहा :—ढ़ाई दिन दो रात तक, आसन दिया जमाय।
मल मूत्र भी कीना नाहीं, अन्न पाणी कुण खाय ॥
प्रभु को ध्यान धर्यो भारी ॥ २ ॥

सामने फक्कड़ एक आयो, गुरुवर उण ने समझायो।
कपट कर बोल्यो वो भायो, भेद भी उनसे खुलवायो ॥
दोहा :—आज कहो या काल थे, हिंसा वन्द नहीं होय।
गुरु देख्यो यो मद छायोड़ो, वात न माने कोय ॥
मिनट दस मौन लियो धारी ॥ ३ ॥

शक्ति निज ऐसी प्रगटाई, आतम में दृढ़ता तव छाई।
जोश कर बोल्या गुरुराई, वात एक सुनले चित्त लाई ॥
दोहा :—तीन मिनिट में गनाहड़ा, हद से हो जा वाहर।
वर्ना तुमको फना कर दूँगा चल हट भाग गिंवार ॥
प्राण ले भाग्यो उस वारी ॥ ४ ॥

सभी रावत दौड़्या आया, शिलापट वहाँ पर लिखवाया।
बंद पशुवध को करवाया, आज भी आण चले भाया ।।
दोहा :—तिलोरा, चावण्डिया, हिंसा कराई बंद।
वहाँ से विचर अजमेर पधार्या घर-घर हर्षानंद ।।
गुरु दी शाबासी भारी ।। ५ ।।

धर्म को डंको बजवायो, विजय सुन मैं भी हरषायो।
बोल थे असंयत बोल्या, प्रायश्चित ले पहले भोल्या ।।
दोहा :—बेला को प्रायश्चित है, कियो त्वरित स्वीकार।
कर्ज रखूँ नहीं मैं तो स्वामी करवा दो इण वार ।।
तुरत ही शुद्धि की सारी ।। ६ ।।

दोष को त्वरित साफ कीना, बाद में शामिल में लीना।
पक्ष नहीं रंच मात्र कीना, वीर का मार्ग दिपा दीना ।।
दोहा :—गलती समझ सामान्य सी, करे उपेक्षा कोय।
आगे में वह बढ़ती जावे, फले दुःखद तब होय ।।
'सोहन मुनि' समझो हितकारी ।। ७ ।।

(पूज्य गुरुदेव श्री धूलचन्द जी महा. सा. अजमेर विराजते थे, वहां पधारे)

१२ | बुद्धि पाये मान

[तर्ज : ख्याल की]

श्रोता जन सुन लो, बुद्धि बल आगे सब बल क्षीण है ।। टेर ।।

तन बल, धन बल मिला बहुत पर, बुद्धि बल नहीं होय ।
सभी मिले निस्सार समझ लो, लाभ न पावे कोय जी ।। १ ।।

'बसन्त पुर' है नगर अनुपम, जन धन से भरपूर ।
राजा राज्य करे 'नरवाहन' धीर वीर रणशूर जी ।। २ ।।

प्रजाजनों को है हितकारक, धारक धर्म प्रवीण ।
ध्यान रखे नित दीन-दुःखी का, करता है दुःख क्षीण जी ।। ३ ।।

महारानी कमला अति सुंदर, रूप गुणों की खान ।
आया द्वार पर सदा अतिथि, पाता इच्छित मान जी ।। ४ ।।

वहाँ रहता था ज्ञान विप्र एक, धनी और विद्वान ।
विप्राणी विमला है घर में, तनय विमल सुख खान जी ।। ५ ।।

किया खूब ही यत्न पिता ने, बने पुत्र विद्वान ।
किन्तु कुछ भी सीख सका नहीं, रहा गया भट्ट समान जी ।। ६ ।।

रूपवान, धनवान विमल था, इससे हो गया ब्याह ।
घर में आयी बहू विदुषी, छाया अति उत्साह जी ।। ७ ।।

अच्छी कमाई होती विप्र के, कमी नहीं घर माँय ।
खावे खर्चे मोद मनावे, आनन्द में दिन जाय जी ।। ८ ।।

चन्द समय पश्चात् मात पितु दोनों कर गये काल ।
सारा भार पड़ गया विमल पर, हुआ हाल बेहाल जी ।। ९ ।।

काम नहीं कुछ भी कर जाने, बैठा-बैठा खाय ।
देख व्यवस्था कहे नार यों, खाने में घर जाय जी ।।१०।।

भरे समुद्र भी खाली होते, बोले यों संसार ।
अतः कमाकर लाओ कुछ भी, बना रहे व्यवहार जी ।।११।।

वह बोला नहि कमा जानता, नहीं किया कुछ काम ।
कैसे कमा कर लाऊँ मुझको, कह दो बात तमाम जी ।।१२।।

नारी बोली राज सभा में, स्वस्ति वचन दे आओ।
वहाँ से जो भी मिले आपको, उससे काम चलाओ जी ॥१३॥

विमल कहे यह शब्द बोलकर, मुझसे कहा न जाय।
सरल तरीके से जो होवे, ऐसा दो बतलाय जी ॥१४॥

पूर्व दिशा में खड़े रहो, कर जोड़ सभा के माँय।
राजा जो भी दे प्रसन्न हो, मुझको देना आय जी ॥१५॥

गया सभा में खड़ा जोड़ कर पूर्व दिशा के माँय।
आकर नृप ने देखा इनको, शत मोहरें दिलवाय जी ॥१६॥

घर लाकर के दीनी नार को, छः महीने सुख पाय।
फिर भेजा उत्तर दिशि माँही, खड़े रहो समझाय जी ॥१७॥

राजा होकर प्रसन्न इसको, दी शत पँच दीनार।
लेकर घर आकर नारी को, जा सौंपी तत्कार जी ॥१८॥

कुछ दिन के पश्चात् विमल के, ऐसी मन में आई।
बिन पूछे ही खड़ा रहूं मैं, जाय सभा के मांही जी ॥१९॥

चला आप घर से बिन पूछे राज सभा में आय।
हाथ जोड़ कर खड़ा हो गया, पश्चिम दिशा में जाय जी ॥२०॥

पश्चिम दिशि में खड़ा देख, नरपति को क्रोध भराया।
धर दो कैद में इस मूरख को, ऐसा हुक्म लगाया जी ॥२१॥

पता लगा विप्राणी को तब, दिल में अति दुःख पाई।
कुछ दाने कुछ तिनके लेकर सभा बीच चल आई जी ॥२२॥

तृण दानों को लख नृप कीनी खड़ी आँगुली दोय।
विप्राणी ने शिर पर फेरा हाथ भूप लिया जोय जी ॥२३॥

तभी भूप ने कहा: विप्र को, मुक्त करो तत्काल।
विप्राणी को हो प्रसन्न नृप देवे सहस्र दीनार जी ॥२४॥

इस घटना से मन्त्रीगण यों करने लगे विचार।
विप्राणी को देख भूप के आया हृदय विकार जी ॥२५॥

देख भाव मंत्री लोगों के, नृप ने दिया सुनाय।
पूछो मत मानूँ मैं इसको, है विकार कुछ नांय जी ॥२६॥

यह भूदेव निरक्षर है और नारी चतुर सुजान।
इसने भेजा पूर्व दिशा में, इसका सुनो बखान जी ॥२७॥

सूर्य तेज सम इस महीपति का तपे तेज दिनंद।
उत्तर में ध्रुव सम ध्रुव भोगे राज भूप सानंद जी ॥२८॥

पश्चिम होता अस्त इसी से मैंने कैद कराया।
तृण दाना लेकर यह आई, इसका भेद बताया जी ॥२९॥

पशु सम है यह मानव मेरा बिन पूछे यहाँ आया।
मैंने पूछा दोय सींग हैं ? इन सिर हाथ फिराया जी ॥३०॥

बिना श्रृंग का जान इसे अब मैंने मुक्त कराया।
इसको बुद्धि बल से मैंने यह इनाम दिलवाया जी ॥३१॥

सुनकर सारे मंत्री गण और सभा गई चकराय।
धन्य धन्य है इस नारी को, सभी रहे गुण गाय जी ॥३२॥

बुद्धि बल से सभी जगह 'मुनि सोहन' शोभा पाया।
दो हजार इकतीस पौष-भोपालगढ़ में आया जी ॥३३॥

१३ | मत भूलो उपकार

[तर्ज : छोटी लावणी]

अहसान करे कोइ दुःख में, आकर प्यारे,
हो सुज्ञ पुरुष तो याद रखे हर बारे ॥ टेर ॥

इक वक्त महीपति गया, घूमने वन में, जब खेंची लगाम तो उड़ा अश्व इक छन में।
कहाँ ठहरेगा नृप यों, सोचे मन में, लगी प्यास अति व्यथित हुआ है तन में॥
जब ढ़ीली हुई लगाम रुका हय वहाँ रे ॥ १ ॥

मिला ग्वाल एक नृप की प्यास बुझाई, भूपति यों सोचे दीने प्राण बचाई।
फिर कहा ग्वाल से आना राज के माँही, अमर सिंह प्रख्यात नाम है भाई॥
यों कह कर आये महल भूप हरसा रे ॥ २ ॥

वह ग्वाल कार्य वश उसी शहर में आया, मैं जाकर मिल लूं ऐसी मन में लाया।
कहाँ रहता है इक अमर सिंह सुन भाया, क्यों बकता ऐसे मूर्ख ! लोक धमकाया॥
सुने न किसकी पूछे है वह कहाँ रे ॥ ३ ॥

आखिर पूछता आया राज के द्वारे, तब द्वारपाल लख उसको यों ललकारे।
आज्ञा राज की मिले तभी सुन प्यारे ! तू जा सकता है अन्दर रहे वह जहाँ रे ॥
अभी पूँछ कर ले जाऊँगा, वहाँ रे ॥ ४ ॥

द्वार पाल आ नृप से अर्ज गुजारे, आया है एक ग्वाल राज के द्वारे।
सुनी बात नर नाथ स्वयं सिधारे, मिले गले में गला डाल उस बारे॥
विस्मित हो गये लख कर जन गण सारे ॥ ५ ॥

सम्मान सहित ला अपने पास बिठाया, फिर सभासदों से उसका भेद बताया।
जल पिला इन्होंने मेरा प्राण बचाया, इनका यह उपकार न जाय भुलाया॥
सुनकर के सब बात कहें वाह वाह रे ॥ ६ ॥

दे नापित को आदेश केश कटवाया, फिर स्नान करा वस्त्राभूषण पहनाया।
बैठ थाल में भोजन उसे कराया, रहने हित सुंदर भवन वहीं बतलाया॥
परिवार सहित रह गया वहीं पर आ रे ॥ ७ ॥

पढ़ा लिखा कर उसको योग्य बनाया, फिर दिया सचिव पद जग में मान बढ़ाया।
जो होवे राज्य में कार्य सभी दरसाया, तुम पालो मंत्री का हुक्म भूप फरमाया॥
सोचे मंत्री अधिकार दिया राजा रे॥ ८॥

सदा महीपति मुझ तारीफ सुनावे, इक वक्त परीक्षा कर लूँ यों मन लावे।
राज कंवर को उठा एकान्त ले जावे, रखा भोयरे माँय मिष्ठान्न खिलावे॥
शोध कराई राज कंवर नहीं पारे॥ ९॥

सब स्थान ढूँढ लिया पता कहीं नहीं पाया, यह देख व्यवस्था भूप बहुत घबराया।
एकाकी मेरा बाल हाल नहीं आया, कोतवाल जा ढूंढो हुक्म लगाया॥
फिरे खोजते स्थान-स्थान हलकारे॥१०॥

भोजन करते ग्वाल नारी यों बोली, पतिदेव ! आपको क्या चिन्ता दो खोली।
क्या कहीं आपकी गिरी नोट की न्योली, कह दो मन की बात बिछाऊँ झोली॥
पति बोला सुन के बात करोगी क्या रे॥११॥

अति आग्रह लख कर पति ने बात सुनाई, यह बात कहीं पे कहना मत तू जाई।
राजकंवर को मार दिया है छिपाई, इस चिन्ता से ही रोटी आज नहीं भाई॥
हुआ बहुत अन्याय मरूँ जा कहाँ रे॥१२॥

सुनी बात वह सद्य चोवटे आई, बुढ़िया को दीनी सारी बात सुनाई।
वृद्धा कहे मत कहना किसी से बाई, फैलाई वृद्धा बात शहर के माँही॥
घर-घर में फैली बात ग्वाल हत्यारे॥१३॥

कोतवाल सुन बात हृदय में लाया, कैसे पकड़ यह नृप की भुजा कहाया।
हिम्मत करके सारा पता लगाया, फिर डाल हथकड़ी राज माँहि ले आया॥
मंत्री ने कीनी हत्या लोक उच्चारे॥१४॥

कर जोड़ कहे गोपाल बुद्धि गई म्हारी, दिया कँवर को मार दोष हुआ भारी।
मैं हूं अपराधी लो मुझ शीश उतारी, जो सजा आप देवोगे लूँ इस वारी॥
स्तब्ध हो गये ग्वाल वचन सुन सारे॥१५॥

वार वार सुन नृप तलवार उठाई, करी म्यान से वाहर सभा चकराई।
अब इसका देगा धड़ से शीश उड़ाई, ले लेगा बदला राजकंवर का यहाँ ही॥
किन्तु महीपति ऐसे शब्द उच्चारे॥१६॥

राजकंवर क्या राज-पाट सब जावे, फिर भी नहीं तुझको मारण का मन चावे।
यह लो तुम तलवार अभी संभलाऊँ, मुझ पर भी कर दो वार न दोष वताऊँ॥
है उपकारी का ऋण ही सबसे वड़ा रे॥१७॥

कृतज्ञ वही, उपकार जो भूले नाँही, रक्खे उसको याद जीवन भर ताँई।
सज्जन भी कहलाय जगत के माँही, उस नर की शोभा कभी न वरणी जाई॥
धन्य किया जो नर अवतार धरा रे॥१८॥

उपकार किये को कृतघ्न जन विसरावे, उलटा उस पर कई आरोप लगावे।
ऐसे नर धिक्कार सदा ही पावे, फिर मर कर दुर्गति पाय ज्ञानी फरमावे॥
तू कृतज्ञता को धार, पार हो जा रे॥१९॥

उस ही क्षण ला कंवर भूप को दीना, मैं करी परीक्षा पास हुए यश लीना।
धन्य धन्य है जग में आपका जीना, नर भव को पाकर उत्तम कारज कीना॥
कहाँ तक महिमा करूँ आपकी गा रे॥२०॥

इकतीस साल की पार्श्व जयन्ती आई, पीपाड़ शहर में हर्षोल्लास मनाई।
तेला अठायी कीनी वहिन और भाई, पाँच सन्त सत्रह दिन रहे सुख माँही॥
'सोहन मुनि' वन कृतज्ञ आत्मा तारे॥२१॥

□□

१४ | दीना प्रभु ने तार

[तर्ज : मारवाड़ी माँड · · · · ·]

हो शासन पति स्वामी, अन्तर्यामी, तारण जहाज समान ।। टेर ।।

एक समय प्रभु विचरत आये, वाणिया ग्राम मंझार ।
वन माली की आज्ञा लेकर, ठहरे जग हितकार हो ।। १ ।।

गौतम स्वामी प्रभु चरणों में, आकर शीश नमाय ।
आज बेले का पारणा प्रभु जी, दो आज्ञा फरमाय हो ।। २ ।।

जैसा सुख हो जिनपति बोले, गौतम गोचरी जाय ।
सुना आप आनन्द श्रावक ने, लिया संथारा ठाय हो ।। ३ ।।

दर्शन देने आये गौतम, श्रावक लख हरसाय ।
विधि युत वंदन कर के अपनी, दीनी बात सुनाय हो ।। ४ ।।

पश्चिम पूर्व दक्षिण उदधि में, पाँच सौ योजन ताँय ।
उत्तर में चूल हेमवन्त तक, देता है दिखलाय हो ।। ५ ।।

उर्ध्व लोक में देख रहा हूं, सौधर्म देव आवास ।
अधो लोक में प्रथम नर्क का, लोलुचुत नरका वास हो ।। ६ ।।

सहस्र चौरासी आयु वाले, स्थान दृष्टि में आय ।
गौतम बोले श्रावक इतना, अवधि ज्ञान नहीं पाय हो ।। ७ ।।

करो आलोयणा इसकी सत्वर, मिथ्या कही जो बात ।
आनन्द श्रावक नत मस्तक हो, सविनय यों दरसात हो ।। ८ ।।

सच्चा भी क्या प्रायश्चित ले ?, देवे आप फरमाय ।
सुनकर गौतम सद्य वहाँ से, वीर समीपे आय हो ।। ९ ।।

आहार दिखाते प्रभु फरमावे, श्रावक से की बात ।
जितना देखा उतना बोला, झूठ नहीं तिल मात हो ।।१०।।

अतः खमावो पहले उनको, यह है सच्चा धर्म।
किंचित भी नहीं वढ़े कर्ममल, यही धर्म का मर्म हो ।।११।।

उस ही क्षण श्रावक के आगे, गौतम स्वामी जाय।
सत्य कही सव घटना तुमने, शासन पति फरमाय हो ।।१२।।

मेरे दिल में नहीं जँची यह, दी मैंने दरसाय।
मन में ठेस लगी हो मुझसे, बारम्बार खमाय हो ।।१३।।

आनन्द श्रावक गद्‌गद हो गया, सुन स्वामी की बात।
कितना किया उपकार हमारा, धन-धन है जिन नाथ हो ।।१४।।

फिर आकर के कियां पारणा, जिन आज्ञा अनुसार।
गौतम स्वाभी हर्षित हो कहे, दीना प्रभु ने तार हो ।।१५।।

यह है प्रभु का मारग सच्चा, नहीं किसी का पक्ष।
निश्चय डूबे पाप छिपाकर, जो बनता है दक्ष हो ।।१६।।

कर चौमासा मेड़ता सिटी, जोधाणा फरसाय।
विचरत आये ठाणा पाँच से, घोड़ा चौक के माँय हो ।।१७।।

इकतीस साल पौस सुदी दशमी, वार भलो बुधवार।
'प्राज्ञ' प्रसादे 'सोहन मुनि' कहे, जिन आज्ञा सिरधार हो ।।१८।।

१५ परभव की बैंक : स्वधर्मी की सेवा

[तर्ज : एवन्ता मुनिवर, नांव तिराई]

श्रोता सुन लीज्यो, खर्ची ले लीज्यो अपने साथ में ।। टेर ।

खर्ची बिन जो हुए रवाना, आगे नहीं पिछान ।
कोई न देगा तुम्हें सहारा, करलो इसका ध्यान जी ।। १ ।।

समझदार वे ही होते हैं, रखते सदा विचार ।
खाली नहीं जाना है यहाँ से, भरा पड़ा भंडार जी ।। २ ।।

इक तोते की कहूं बात मैं सुनो लगा कर ध्यान ।
इस भव पर भव का था उसको, कितना अच्छा ज्ञान जी ।। ३ ।।

शुक परिवार में था वो अग्रणी, रखते सब ही मान ।
जैसी आज्ञा होती उसकी, करते सभी प्रमाण जी ।। ४ ।।

एक दिन चुगने गये खेत पर, जहाँ पका था धान ।
सारे तोतों को वहाँ बैठे देख सोचे किसान जी ।। ५ ।।

त्वरित जाल बिछाया उसमें, फँस गया शुक सरदार ।
सारे तोते उड़ गये वहाँ से, जान बचा उस बार जी ।। ६ ।।

किसान कहे तुम खाते हो पर, क्यों ले जाते वाल[1] ।
इसका क्या करते हो कह दो, अपना सारा हाल जी ।। ७ ।।

मानव की भाषा में बोला, सुनलो देकर ध्यान ।
कर्ज चुकाता, ऋण भी देता, जमा कराता धान जी ।। ८ ।।

किसान कहे नहीं समझा इसका, रहस्य मुझे बतलावो ।
कर्ज चुकावो, ऋण भी देवो, कैसे जमा करावो जी ।। ९ ।।

तोता कहता मात पिता मुझ, वृद्ध अवस्था माँय ।
उनका कर्जा मेरे सिर है, चुका रहा उन ताँय जी ।।१०।।

बालपने में पालन कीना, धर कर पूरण प्यार ।
कम खा करके मुझे खिलाया, कीनी पूरी सार जी ।।११।।

डांगी

ऋण देता हूं उन्हें सदा मैं, हैं जो मुझ संतान।
सेवा करेंगे वृद्धापन में, रक्खेंगे वे ध्यान जी ॥१२॥

पर भव की है बैंक मेरी मैं, उसमें जमा कराऊं।
कभी न होवे फेल उसी से, चाहूं तब ही पाऊँ जी ॥१३॥

उसके लिये स्वधर्मी जो भी, होवे दीन अपंग।
उनके हित में देता हूं मैं, रखने कायम अंग जी ॥१४॥

सुनकर सारी बातें उसकी, गदगद् हुआ किसान।
धन्यवाद देकर कहता है, तुझ सम नहि इन्सान जी ॥१५॥

सादर मुक्त करी तोते को, मन में करे विचार।
आज मनुष्य में कितना छाया, देखो हृदय विकार जी ॥१६॥

मात-पिता को भूल गया और, भूल गया उपकार।
निज संतति के सिवा किसी की, नहिं ले सार संभार जी ॥१७॥

नहिं जायगा संग यहाँ का, धन दौलत भंडार।
'प्राज्ञ' प्रसादे 'सोहनमुनि' कहे, सुनो सभी नर नार जी ॥१८॥

याद रखो पर भव को हरदम, निश्चय यहां से जाना।
खर्ची ले लो अपने संग में, नहिं होवे पछताना जी ॥१९॥

दो हजार इकतीस फाल्गुनी, सुदी बीज शनिवार।
सोजत रोड विचरते आये, पाँच सन्त हितकार जी ॥२०॥

१६ सबको प्यारे प्राण

[तर्ज : नेमजी की जान बनी]

प्राण निज सबको प्रिय मानो, निजी सम सुख दुःख भी जानो ।। टेर ।।

राजगृह श्रेणिक महाराया, मंत्री वर अभय कंवर भाया ।
राज का काज करे सवाया, दीन पर है पूरण छाया ।।
दोहा :—चार बुद्धि के हैं धनी, श्रावक व्रत के धार ।
जीव दया के पालक पूरे, करुणा के भंडार ।।
गिने जिन धर्म कठिन पानो ।। १ ।।

एक दिन सभा भवन माँही, मुसद्दी नृप से दरसाई ।
घोषणा करो राज माँही, विके नित आमिष सस्ता ही ।।
दोहा :—अतः सभी जन मांस का, करें खूब उपयोग ।
इससे अर्थ बचेगा भारी, सुखी रहेंगे लोग ।।
प्रजाजन चालू करे खानो ।। २ ।।

अभय सुन सोचे दिल माँही, पराया दुःख जाने नाहीं ।
कहूं क्या मैं इनके ताँही, विना अनुभव समझे नाहीं ।।
दोहा :—अभय कंवर जी रात में, गये उन्हीं के पास ।
आता देख अभय को बोले, क्या आज्ञा है खास ।।
कार्य वश हुयो मेरो आनो ।। ३ ।।

महीपति रोग ग्रसित इस वार, अचानक हुए न लागी वार ।
वैद्य कहे होंगे तव तैयार, कलेजा देना करें स्वीकार ।।
दोहा :—दो तोला तुम माँस की, है मुझको दरकार ।
आशा लेकर आया यहाँ पर, नहिं होंगे इनकार ।।
बात सुन हिरदय धड़कानो ।। ४ ।।

करी वे खूवहि नरमाई, भूलूँ उपकार कभी नाँही ।
प्राण की भिक्षा मुझ ताँही, वगस दो है इच्छा याही ।।
दोहा :—लाख रुपै ले जाइये, दीजे मुझको छोड़ ।
रुपये लेकर चले वहाँ से, पहुंचे दूजी ठौड़ ।।
कँवर को लखकर कंपानो ।। ५ ।।

मान दे आसन बैठाया, पूछता आप केम आया।
अभय ने सब ही दरसाया, बात सुन अति ही घबराया ॥
दोहा :—वह भी अरजी इम करे, लाख रुपै ले जाय।
किन्तु कृपा कर आप अभी दो, मेरे प्राण बचाय ॥
लाख दस संग्रह कियो नाणो ॥ ६ ॥

सवेरे सभा भरी भारी, मंत्री सब बैठे उस वारी।
अभय ने आकर उच्चारी, बोल कर कह दो इस बारी ॥
दोहा :—मांस बिके किस भाव से, मंदा मंहगा होय।
गरदन कर ली सबने नीची, बोल सके नहिं कोय ॥
उत्तर को दीखे नहि ठाणो ॥ ७ ॥

अभय तब सब को समझावे, कंटक एक पग में लग जावे।
जीवड़ो कितनो दुःख पावे, निकाले तभी शान्ति आवे ॥
दोहा :—तलवार चलाते आपको, क्यों नहीं होय विचार।
अपने प्राण सम सबको समझो, है जीवन का सार ॥
मिल्यो है नर भव को टाणो ॥ ८ ॥

गीता अरु भागवत गाया, हिंसा सम पाप नहीं भाया।
हजारों यज्ञ करवाया, तथापि तुलना नहि पाया ॥
दोहा :—एक रोम के एक सहस, वर्ष नर्क के माँय।
पचता है वह कुंभी पाक में, दुःख का पार न पाय ॥
समझ कर समझ हिए आणो ॥ ९ ॥

बात सुन मन में शरमाया, सत्य जो तुमने फरमाया।
लोलुपी बनकर भरमाया, समझ में अब हम रे आया ॥
दोहा :—त्याग करे हम आज से, नहीं खायेंगे माँस।
करे न हिंसा किसी जीव की, कोई न पावे त्रास ॥
जहर सम आमिष को जाणो ॥१०॥

धर्म का मर्म नहीं जाने, वही नर अघ में धर्म माने।
धर्म हित मारे जीवां ने, भोगते दुःखड़ा अति पाये ॥
दोहा :—सुख दिया सुख होत है, दुःख दिया दुःख होय।
आप हणे नहीं किसी जीव को, आपहुं हणे न कोय ॥
'मोहन मुनि' को है चेताणो ॥११॥

१७ | न सज्झाय समं तवो

[तर्ज : नेमजी की जान बनी]

सज्झाय बिन ज्ञान नहीं आवे, ज्ञान बिन मोक्ष नहीं पावे ।। टेर ।।

ज्ञान की महिमा सब गावे, ज्ञान से जग का पार पावे ।
ज्ञान से ज्ञानी कहलावे, ज्ञान से कीमत बढ़ जावे ।।
दोहा :—प्रथम ज्ञान पीछे दया, है जिन मत का सार ।
ज्ञान सहित करणी करे, तब उतरे भव पार ।।
बात यह आगम में गावे ।। १ ।।

शहर एक अलकापुर नामी, भूप जहाँ भूधर गुण धामी ।
प्रजा में शोभा अति पामी, दीन दु:खियों का हित कामी ।।
दोहा :—ज्ञान नया नित सीखता, जो भी आय सुनाय ।
स्वर्ण टका दे एक उसे नृप, खुश होकर के जाय ।।
सुनाने नित्य नये आवे ।। २ ।।

भूप के 'जालिम' राजकुमार, कार्य में हुआ बहुत हुशियार ।
एक दिन मन में करे विचार, राज कब आवे हाथ मंझार ।।
दोहा :—जब तक नृप मौजूद है, तब तक व्यर्थ विचार ।
अब मैं ऐसा कार्य करूँगा, नृप को दूँगा मार ।।
जल्दी ही राज्य हाथ आवे ।। ३ ।।

उपाय केई दिल माँही लाया, किन्तु नहीं एक समझ पाया ।
सोचकर नापित घर आया, बताकर उसको समझाया ।।
दोहा :—आज भूपति के गले, देना राछ चलाय ।
किन्तु बात यह कोई न जाने, दूँगा सभी दबाय ।।
राज से फिर इनाम पावे ।। ४ ।।

उसी दिन उसी गाँव वासी, विप्र एक भोला अविनाशी ।
कृषक का काम करे खासी, पकड़ कर बैलों की रासी ।।
दोहा :—पानी पिलाने ले चला, आया सरवर पाल ।
देखा शूकर कीचड़ करता, समझ विप्र सब हाल ।।
बना पद भूप पास आवे ।। ५ ।।

सुना पद स्वर्ण टका लीना, भूप भी खुश होकर दीना ।
याद भी तत्क्षण कर लीना, दोहे को जाने रंग भीना ॥
दोहा :—घसे घसे ने अति घसे, ऊपर गाले पाणी ।
जिण कारण तू घसे घसावे वही बात मैं जाणी ॥
बोलकर भूपति दरसावे ॥ ६ ॥

इते चल नापित वहाँ आया, राछ के सिल्ली लगवाया ।
भूप तब दोहा फरमाया, श्रवण कर नापित घबराया ॥
दोहा :—मेरे काम को भूप ने लीना है पहचान ।
नहिं मालूम किस मौत मरावे, बोला हो हैरान ॥
दोष नहीं मेरा दरसावे ॥ ७ ॥

भूप कहे नापित से उस बार, कौन है दोषी कार्य मंझार ।
नापित कहे असली राजकुमार, बात कही स्पष्ट बोल इस बार ॥
दोहा :—सुनकर नृप चमका हिये, है कैसा संसार ।
राज पाट सब त्याग अभी मैं, ले लूँ संयम भार ॥
ज्ञान से मृत्यु टल जावे ॥ ८ ॥

आध्यात्मिक ज्ञान अगर पाऊँ, निश्चय ही मुगती में जाऊँ ।
जन्म अरु मरण मिटवाऊँ, अक्षय सुख शिव गति का पाऊँ ॥
दोहा :—त्वरित संतरी भेज के, बुला लिया सुकुमार ।
सेवा करे प्रजा की दिल से, लेवो राज संभार ॥
मेरे मन संयम अब भावे ॥ ९ ॥

कँवर ने प्रार्थना कीनी, भावना बुरी मैं कर लीनी ।
लालच बस मन में नहिं चीनी, नींव मैं दुर्गति की दीनी ॥
दोहा :—भूप कहे नहिं दोष तुझ, है मेरा ही दोष ।
तूने तो मुझको चेताया, नहीं तेरे पर रोष ॥
राज्य पर उसको बैठावे ॥१०॥

भूप ने संयम ले लीना, ज्ञान से आतम को चीना ।
क्रिया कर मुक्ति वास कीना, भवों के चक्र मिटा दीना ॥
दोहा :—अल्प ज्ञान संसार का, देवे मरण निवार ।
जो आध्यात्मिक ज्ञान धारकर, अक्षय शिव सुख पाय ॥
ज्ञान यह भविक हृदय भावे ॥११॥

करो स्वाध्याय सदा भाई, निर्जरा होवे अधिकाई ।
कर्म से छुटकारा पाई, भोगे सुख अनन्त मुक्ति जाई ॥
दोहा :—'प्राज्ञ' कृपा 'सोहन' मुनि, कहे यह बारम्बार ।
जिनवाणी का कर स्वाध्याय, करो जन्म सुधार ॥
नियम ले पावो सुख भावे ॥१२॥

१८ नवकार मंत्र की महिमा

[तर्ज : एवन्ता मुनिवर नाँव तिराई]

सब सँकट जावे, इच्छित सुख पावे, श्री नवकार से ।। टेर ।।

अजितपुर का जितशत्रु नृप, अरि पर काल समान ।
दु:ख भंजन दु:खिया मानव का, गुणियों को दे मान ।।
न्याय नीति से राज चलावे, राजा गुण की खान जी ।। १ ।।

महाराणी मलया सुन्दर है, पतिव्रता पुण्य वान ।
दीन अनाथ अपंग जनों का, रखती पूरा ध्यान ।।
कुल की आन-शान का जिनको, पूरा-पूरा ज्ञान जी ।। २ ।।

मंत्री सागर-सागर सम है, चार बुद्धि का धार ।
सदा ध्यान से राज काज की, करता है संभार ।।
न्याय नीति का पूरा ज्ञाता, है रैय्यत रखवार जी ।। ३ ।।

इसी शहर में कोटिपति एक, नामी वसुदत्त सेठ ।
श्रावक व्रत का पालक सच्चा, पूरी नगर में पैठ ।।
खरी आय होती है घर में, दीनी अनीति मेट जी ।। ४ ।।

सेठाणी कमला-कमला सम, शोभित रूप महान ।
दान पूण्य करती हर्षित हो, रखकर पूरा ध्यान ।।
संत सती की सेवा करके, पाया जिसने ज्ञान जी ।। ५ ।।

आनन्द वरत रहा है घर में, एक कमी दु:खदाय ।
दम्पति के दिल में यों आ रहा, पुत्र विना घर जाय ।।
किन्तु सोचे अभी हमारे, उदय कर्म अन्तराय जी ।। ६ ।।

अर्ध आयु के वाद आस रही, हर्षे मन के माँय ।
वाँध रहे मन में मनसोवे, कव ऐसा दिन आय ।।
निज नयनों से अपने सुत को, देखे दिल हरसाय जी ।। ७ ।।

मास सवा नौ वीते वाद में, पुत्र रत्न को पाया ।
खूब दिया धन दान पुण्य में, खुशी हृदय में लाया ॥
याद रहे यह वात सदा ही, ऐसा फंड वनाया जी ॥ ८ ॥

परिजन सन्मुख दिया पुत्र का, लक्ष्मी चंद शुभ नाम ।
एक दिन सोचे सेठ जीमाऊँ, अपनी न्यात तमाम ॥
सद्य कराया प्रवन्ध वाग में, भेज सभी सामान जी ॥ ९ ॥

दिया निमंत्रण, किया वुलावा, पहुंचे सव नर नार ।
सेठ कहे सेठाणी से तुम, होकर के तैयार ॥
वग्घी मांही आ जाना, मैं जाता हूं इस वार जी ॥१०॥

सज शृंगार स्वयं सेठाणी, ले वालक को लार ।
चढ़ वग्घी पर हुई रवाना, पहुंच गई तत्कार ॥
वड़े प्रेम युत मिलकर सवसे, हर्षित हुई अपार जी ॥११॥

न्यात जीम गई सेठ कहे अव, हो जल्दी तैयार ।
रात हो गई घर पर जावो, हो वग्घी असवार ॥
रस्ता है कुछ लम्वा यहां से, रहना तुम हुशियार जी ॥१२॥

वग्घी में सानन्द वैठकर, विदा हुए तत्कार ।
मारग मांही कोचवान[1] के, आया हृदय विचार ॥
कितना गहना इनके तन पर, पड़ा हुआ इस वार जी ॥१३॥

किसी तरह भी इतने भूषण, मेरे कर[2] लग जाय ।
सारी जिन्दगी रहूं मोद में, दारिद्र घर से जाय ॥
इस अवसर को ना जाने दूं, कर लूं अभी उपाय जी ॥१४॥

ले जाकर अटवी में इनको, सत्वर देऊँ मार ।
गहने कपड़े कर कब्जे में, दूंगा कूप में डार ॥
यही सोच वग्घी को वन में, हांक दियी तत्कार जी ॥१५॥

सेठाणी कहे मार्ग नहीं यह, कहां मुझे ले जाय ।
वह बोला कर लाल नेत्रों, बक बक दूर हटाय ॥
ज्यादा की तो अभी मार कर, दूंगा फेंक वन मांय जी ॥१६॥

मीठे स्वर में कहे सेठाणी, मेरा ही विश्वास ।
पाल पोस कर मोटा कीना, समझा तुमको खास ॥
ऐसी क्या यहाँ रचना है, सच्चो सच प्रकाश जी ॥१७॥

१- बग्घी का चालक

२- हाथ

कोचवान कहे रहने दे यह, सुने न मेरे कान।
अच्छी तरह से सुन लेना अब, देकर पूरा ध्यान।।
मारूँगा मैं तुमको यहां पर, कर दे बंद जबान जी ।।१८।।

सुनकर कम्पित हो सेठाणी रोकर बात सुनाय।
मेरे सब गहने ले ले तू और मांग मन चाय।।
प्राण दान दे भीख मांगती, सन्मुख झोली बिछाय जी ।।१९।।

बस सेठाणी चुप हो जा अब, करूं वही मन चाय।
तुझे और तेरे बच्चे को, डाल कूप के मांय।।
इतना कह झट हाथ पकड़, बग्घी से दिया गिराय जी ।।२०।।

घबरा कर सेठाणी बोली, ले ले मेरे प्राण।
पति वंश रखने को दे दे, इसको जीवन दान।।
एक बात नहीं सुनी हरामी, छाया लोभ महान जी ।।२१।।

कोचवान यों सोचे कैसे, डालूं कूप के मांय।
जिससे वापिस पानी ऊपर, तैर सके नहीं आय।।
भारी पत्थर साथ बाँध दूँ, फिर नहीं ऊपर आय जी ।।२२।।

बांध वस्त्र में माँ बेटे, को लाया कूप के पास।
उपल[3] खोजता फिरे वहाँ पर, नहीं फली मन आस।।
देख खेत में भारी पत्थर, पाया अति उल्लास जी ।।२३।।

लगा उठाने उस पत्थर को, हिलता नहीं हिलाये।
तभी एक बाँबी से निकला, कृष्ण नाग वहाँ आये।।
कोचवान के हाथ पैर में, नाग देव लिपटाये जी ।।२४।।

मारे भय के सोचे मन में, होगी क्या गति म्हारी।
कैसे प्राण बचेंगे मेरे, दिया डंक यदि मारी।।
किये पाप का फल प्रकटाया, आया बदला भारी जी ।।२५।।

उधर सेठाणी बंधी वस्त्र में, जपे मंत्र नवकार।
नहीं बचाने वाला कोई, एक तेरा आधार।।
एकाग्रह कर मन से कहती, नाथ बेड़ा कर पार जी ।।२६।।

उसी समय वहां मंत्री आया, करके कहीं से काम।
आवाज सुनी ठहरायी बग्घी, कहे कौन इस ठाम।।
नौकर से कहा कौन बोल रहा, देखो स्थान तमाम जी ।।२७।।

इधर उधर फिरते देखा है, गांठ बंधी उस वार।
उसमें से आवाज आ रही, सोचे हृदय मंझार।।
इतनी रात में प्रेत सिवा यहाँ, कौन आय नर नार जी ।।२८।।

३- पत्थर

भय खाकर के दौड़ा आया, कहे प्रेत की चाल।
गांठ वस्त्र की बंधी पड़ी है, देखें आप निहाल॥
यही आप से अर्ज करूँ, तज चलो स्थान तत्काल जी ॥२९॥

मंत्री बोला आज प्रेत की, देखूंगा मैं चाल।
हिम्मत करके गांठ पास आ, बोला यों तत्काल॥
अन्दर कौन गांठ में बोलो, अपना सच्चा हाल जी ॥३०॥

मुझे बचाओ मुझे बचाओ, मैं हूं अबला नार।
सुन आवाज मन्त्री ने दीनी, गाँठ खोल उस बार॥
अपना परिचय दीना उसने, कही बात सब सार जी ॥३१॥

कोचवान की नीयत बिगड़ी, लाया मारन काज।
गहने सारे छीन लिये, फिर करता यहाँ अकाज॥
अभी अभी तो यहीं खड़ा था, कहाँ गया अब भाँज जी ॥३२॥

आये ढूंढने उसी स्थान पर, खड़ा सर्प लिपटाय।
उसको लखकर मंत्री मन में, गहरा विस्मय लाय॥
कहे सर्प से छोड़ो इसको, सजा किये की पाय जी ॥३३॥

फिर भी सर्प न छोड़े तब, यों मंत्री प्रार्थना कीनी।
सती सुरक्षा की गारन्टी, नागदेव ! मैं लीनी॥
यह सुनते ही त्वरित नाग ने, अपनी राह ले लीनी जी ॥३४॥

कोचवान को कर बंदी झट, अपने कब्जे कीना।
सेठानी को अपने संग ले, आश्वासन भी दीना॥
स्थान आपके पहुंचाऊँगा, जिम्मा मैनें लीना जी ॥३५॥

लाकर के अपने कोठी पर कहा बहिन ! सानन्द।
चिंता तजकर रात विताओ, पावो परमानन्द॥
सेठाणी बालक दोनों का, कटा कष्ट का फंद जी ॥३६॥

घर आकर श्रेष्ठी ने देखा, सेठाणी है नांय।
क्या कारण है क्यों नहीं आई, लिये स्थान ढुँढवाय॥
पता कहीं पर नहिं पा करके, रहा सेठ घबराय जी ॥३७॥

सारे शहर में चर्चा हो गई, सेठाणी नहीं आई।
क्या कारण है सभी ढूँढ रहे, शंका गहरी छाई॥
थक कर सारे बैठ गये नहीं, कहीं सूचना पाई जी ॥३८॥

इतने में आ गया संतरी, कह दीना सब हाल।
सेठाणी जी सुरक्षित है, ले आवे वहाँ चाल॥
नगर निवासी सेठ साथ में, आये चल तत्काल जी ॥३९॥

घटना सारी मंत्री मुख से, सुनी सभी नर नार।
करुण कहानी सुनकर सबके, बह गई अश्रूधार॥
नवकार मंत्र की महिमा फैली, नगर ग्राम घर द्वार जी॥४०॥

सदा पालना कीनी जिनकी, निकला वह बदकार।
कैसा पापी नमक हरामी, मुख से दे धिक्कार॥
पाप करे छिप करके कोई, प्रकट होय तत्कार जी॥४१॥

सेठाणी सानन्द महल में, पहुंच गयी है आय।
पंच पदों का प्रभाव उसको, स्पष्ट रहा दिखलाय॥
मृत्यु मुख से निकले दोनों, इष्ट जाप सुखदाय जी॥४२॥

कोचवान के उदय हो गया, कर्म त्वरित फल पाय।
राजा के सम्मुख सब घटना, दी उसने दरसाय॥
जेवर को लख करके मेरी, बुद्धि भ्रष्ट हो जाय जी॥४३॥

आजीवन तक रखो कैद में, दीनी सजा सुनाय।
दुःख आने पर सोचें मन में, पाप प्रकट हुआ आय॥
पहले तो हँस हँस कर मानव, लेता पाप कमाय जी॥४४॥

सेठ सेठाणी दोनों ने ही, समझ लिया संसार।
ज्ञान ध्यान अरु जप तप माँही, जीवन रहे गुजार॥
अंत समय में धर्म ध्यान कर, लीना जन्म सुधार जी॥४५॥

'प्राज्ञ' प्रसादे 'सोहन' मुनि कहे, समझो हे नर नार।
पाप अठारह से बच जाओ, पाया नर अवतार॥
जपो सदा नवकार मंत्र को, होवे जय जयकार जी॥४६॥

१९ कुंडलिक श्रावक और रत्नाकर सूरि

[तर्ज : छोटी लावणी]

श्रावक हो गंभीर, ज्ञान का धारी ।
जिन शासन चमके खूब, सुनो नर नारी ।। टेर ।।

करे वात वह जिन आज्ञा अनुसारी, 'समय साथ बदलो' न कहे गुणधारी ।
विपरीत चले जिन आज्ञा से व्रतधारी, युक्ति करके उनको लेय सुधारी ।।
सुनो कथा इक श्रोता सब हितकारी ।। जिन० ।। १।।

जैनाचार्य श्री रत्नाकर हुए नामी, तीव्र बुद्धि से स्थान-स्थान जय पामी ।
इक महीपति ने करके खूब अगवानी, ला अपने राज्य में गुरु लिये है मानी ।।
रत्न पालकी दीनी भेंट मंझारी ।। जिन० ।। २ ।।

सभा बीच में जो भी पंडित आवे, कर उनसे वाद विवाद सद्य जय पावे ।
फिर बैठ वाहन में उपासरे को जावे, पंडित गण जय जय हो यह घोष सुनावे ।।
उस वक्त गाँव का आया घृत व्यापारी ।। जिन० ।। ३ ।।

था कुंडलिक श्रावक वीर भक्त गुणधारी, आचार्य देव की देख व्यवस्था सारी ।
जिन मत का हो रहा ह्रास बात दिल धारी, इस भौतिकता में उलझे महाव्रत धारी ।।
मैं साधारण हूं कैसे कहूं इस वारी ।। जिन० ।। ४ ।।

किन्तु परीक्षा करके देखूँ यहाँ ही, कितने अंशों में भ्रष्ट हुए व्रत माँही ।
अथवा सारे व्रत ही दिये गँवाई, वाह वाह के दल में कितने गये फंसाई ।।
हो खड़ा मार्ग में गुरु की स्तुति उच्चारी ।। जिन० ।। ५ ।।

गुरुदेव ! आपको देख स्मरण हुआ आई, श्री गौतम, सुधर्मा, जंबू लिये लखाई ।
यह सुनकर सूरी म्लान मुखी बन बोले, क्यों देते हँस की उपमा काग को भोले ।।
उनसे तो रज सम नहीं साधना म्हारी ।। जिन० ।। ६ ।।

वे शुद्ध चारित्री कहाँ ? कहाँ मैं भाई ? उनके जीवन की लेऊँ रज भी पाई ।
तो समझूँ अपना जीवन धन्य जग माँही, यह सुनकर श्रावक समझ गया मन माँही ।।
है वीतराग वचनों पर श्रद्धा थाँरी ।। जिन० ।। ७ ।।

ये लेंगे अपना जीवन पुनः सुधारी, यों सोच सुबह वह गया पास गुरु आरी ।
व्याख्यान श्रवण कर पाया हर्ष अपारी, गाथा का अर्थ फिर पूछा है उस वारी ।।
लख गाथा मन में सूरी भाव विचारी ।। जिन० ।। ८ ।।

गाथा का नूतन अर्थ दिया बतलाई, दो मुझको इसका मूल अर्थ समझाई।
यों छः महीने में दिया अर्थ दरसाई, सुन कहे आपकी कहाँ तक करूँ बड़ाई।।
श्री मुख से सुन लूँ मूल अर्थ चाह म्हाँरी ।। जिन० ।। ९ ।।

करी कमाई मैंने सब यहाँ खाई, अब कल जाने का भाव मेरे गुरु राई।
आचार्य सुनी यह बात सद्य फरमाई, कल ही दूंगा मैं मूल अर्थ बतलाई।।
श्रावक गये के बाद मुनि यों विचारी ।। जिन० ।।१०।।

मैंने तो खो दी श्रमण मर्यादा सारी, हो गया मैं कितना चरित्र भ्रष्ट इस वारी।
फँस भौतिक सुख में आतम ज्ञान विसारी, लख ठाठ राजसी दीना जन्म बिगारी।।
छोड़ परिग्रह हुए शुद्ध अणगारी ।। जिन० ।।११।।

जब दिवस दूसरे अर्थ समझने आया, आचार्य श्री को देख हृदय हरसाया।
आमूल चूल अब ज़ीवन ही पलटाया, सच्चे हो गये संत छोड़ मोह माया।।
श्रावक बोला इच्छा सफल हुई म्हारी ।। जिन० ।।१२।।

आचार्य कहे मैं भूला बहुत ही भाई, उलझ गया माया की दल दल माँही।
मैं रहा दूसरा अर्थ तुम्हें बतलाई, सही अर्थ को छिपा रहा नित का ही।।
सच्चें अर्थ का भान हुआ इस वारी ।। जिन० ।।१३।।

मम पूर्वाचार्य तो हो गये पूर्ण विरागी, समझ अर्थ को, अनर्थ दिया था त्यागी।
कर्त्तव्य विसर मैं गया माया में लागी, संकेत तेरा पा मेरी आत्मा जागी।।
इस गाथा ने ही दीना मुझे उबारी ।। जिन० ।।१४।।

जो संग्रह कर निर्ग्रंथ मुनि कहलावे, वह सेवे अठारह पाप ज्ञानी फरमावे।
फिर गृहस्थ और साधु में भेद क्या पावे, तज कर के देह को दुर्गति मांही जावे।।
सुन श्रावक ने दिया धन्य-धन्य उच्चारी ।। जिन० ।।१५।।

'प्राज्ञ' प्रसादे 'सोहन' मुनि दरसावे, ऐसे ही श्रावक जिन मत को दीपावे।
जो विधि युक्त स्वाध्याय करे चित चावे, श्रद्धा हो मजबूत न डिगने पावे।।
तभी धर्म फैलेगा घर-घर द्वारी ।। जिन० ।।१६।।

दो हजार तैंतीस साल के माँही, फागण बुद दशमी सूर्यवार सुखदाई।
शहर भाणगढ़[1] दीनी जोड़ सुनाई, श्रोता गण सुनकर लीज्यो हिए जमाई।।
ज्ञान ध्यान में रमण करो हर वारी ।। जिन० ।।१७।।

[1]- भिणाय

२० | श्री नानक गुरु महिमा

[तर्ज : मारवाड़ी मांड]

हो पूज्य राज हमारा, प्राण पियारा, तारण जहाज समान ।। टेर ।।

महाकिरण रा लाड़ला जी, गंगा दे ना पूत ।
जन्म लेई ने वंश दिपायो, प्रगट्या सत्य सपूत हो ।। १ ।।
विक्रम सम्वत् सत्रह सौ, सित्याणू फागुण मास ।
कृष्णा तेरस महाराष्ट्र में, ग्राम 'काजुआ' खास जी ।। २ ।।
श्री मलूक आचार्य देव की, वाणी सुन पूण्य वान ।
अन्तर्घट में जागिया जी, पाया उत्तम ज्ञान हो ।। ३ ।।
भव सिंधु है महाभयकारी, ज्ञानी जन फरमाय ।
बिन करणी नहीं तिर सकता हूँ, यों चिन्ते चित्तमाँय हो ।। ४ ।।
मात-पिता की आज्ञा लेकर, सारूँ आतम काज ।
वंदन करके घर आ बोले, धन-धन है मुनिराज हो ।। ५ ।।
उत्तम करणी करके जग में, कर्म रहे हैं काट ।
मेरी भी इच्छा है ऐसी, लेऊँ वहीं मैं वाट[1] हो ।। ६ ।।
आज्ञा दे दो संयम लेकर कर लूँ निज कल्याण ।
विस्मय ला पितु मात उच्चारे, क्या जाने नादान हो ।। ७ ।।
संयम मारग चालणो है, खराखरी को काम ।
बाइस परीषह झेलणा है, सहना कष्ट तमाम हो ।। ८ ।।
हिम्मत करके सहन करूँगा, आवेंगे जो कष्ट ।
आतम ज्ञान में रमण करी ने, कर्म करूँगा नष्ट हो ।। ९ ।।
साहस लख अपने ही सुत का, आज्ञा दी हरसाय ।
संवत् अठारह सौ बारह में, संयम लियो सुखदाय हो ।।१०।।
विनय करी गुरु की भल भावे, सीखे ज्ञान अपार ।
ज्ञानावरणीय क्षयोपशम से, सम्यक् ज्ञान लिया धार हो ।।११।।
चंद समय में योग्य समझकर, सूरी पद सभलाय ।
ज्ञान क्रिया से शासन चमका, दिग् दिगन्त के माँय हो ।।१२।।

१- मार्ग

आचार्य श्री ले संत मंड़ली, अजयमेर में आय।
घूम रहे रहने के हेतु, स्थान कहीं नहीं पाय हो ॥१३॥
उस समय था जोर यहां पर, यतियों का भरपूर।
इसीलिये भय खाकर सारे, थे संतों से दूर हो ॥१४॥
एक यति ने सोचा मन में, कैसे ये गये आय।
ऐसा स्थान बताऊँ इनको, मरण शरण हो जाय हो ॥१५॥
आग्रह करके वहाँ ले गया, जहाँ व्यन्तर का वास।
आचार्य प्रवर तो ठहर गये वहाँ, रख करके विश्वास हो ॥१६॥
एक भाई वहाँ आकर बोला, यह स्थान भयकार।
रात रहे यहाँ मृत्यु पावे शंका नहीं लिगार हो ॥१७॥
आचार्य श्री सब समझ गये यहाँ, छोड़ गया वह लाय।
अब हमको रहना है यहाँ पर, अन्य स्थान नहीं जाय हो ॥१८॥
सारा दिन सानन्द बिताया, ज्ञान ध्यान के मांय।
रात्रि समय में सजग रहे हैं, कौन यहाँ पर आय हो ॥१९॥
मध्य निशा में आय असुर ने, कीनी घोर आवाज।
थर्राए वन पर्वत सारे, मानों गगन रहा गाज हो ॥२०॥
आचार्य श्री के पास में आकर, कीने अति उत्पात।
किंतु अडिग लख समझा मन में, है यह तो मुनि नाथ हो ॥२१॥
चरण नमी यों बोला गुरु से, होगी जय जयकार।
सभी विरोधी नम जायेंगे, होगा धर्म प्रचार हो ॥२२॥
सारे प्रांत को मिथ्यामत से, दीना है छुड़वाय।
असली धर्म का रहस्य बताकर, समकित दृढ़ करवाय हो ॥२३॥
विक्रम सम्वत् अठ्ठारह सौ, उनसित्तर के माँय।
वसन्त पंचमी स्वर्ग सिधारे, जिन शासन दीपाय जी ॥२४॥
सारा प्रान्त यह सदा आपका, है पूरा ऋण दार।
आज आपके दीक्षा दिन को, मना रहा तपधार हो ॥२५॥
हुए आपके शिष्य अनेकों, ज्ञान ध्यान तपशूर।
क्रिया पात्र, जिन आज्ञा पालक, शोभा ली भरपूर हो ॥२६॥
'प्राज्ञ चन्द्र गुरुदेव' कृपा से, 'सोहन' मुनि गुण गाय।
नाम जाप सब संकट टाले, पग पग पर जय पाय हो ॥२७॥

□□

जन्म : विक्रम सम्वत् १७९७ फागुन वद १३ शुक्रवार
ग्राम-काजुआ (बरार) महाराष्ट्र
दीक्षा : विक्रम सम्वत् १८१२ चैत्र सुदी ९ (रामनवमी)
स्वर्ग : विक्रम सम्वत् १८६९ माघ शुक्ला ५ (वसंत पंचमी)
सूचना : आचार्य पद की तिथि ज्ञात नहीं है।

२१ अरक्षितं तिष्ठति दैवरक्षितम्

[तर्ज : छोटी लावणी]

जो लम्बी आयुष संग में, लेकर आवे,
वह मरे नहीं कितनी भी चोटें खावे ।। टेर।।

अपनी भाषा में लोक यही दरसावे, प्रभु जाँके रक्षक जीवन में हो जावे।
उसे कोई भी कभी मार नहीं पावे, हो बैरी कुल संसार किन्तु बच जावे।।
इस पर ही तुमको कथा, एक सुनावे ।।वह०।। १ ।।

इक सेठ दम्पती किसी काम वस जावे, जा बैठ रेल में सुख से समय वितावे।
थी गर्भवती स्त्री थोड़ा कष्ट प्रकटावे, वह सोयी रेल में दर्द तो बढ़ता जावे।।
तब सहसा उठकर पाखाने में जावे ।।वह०।। २ ।।

जा अंदर बैठी होश रहा कुछ नांही, बच्चा निकल जा गिरा संडासे माँही।
वह दोनों पटरी के पड़ा बीच में जाई, वहां रोता है पर कौन करे सुनवाई।।
सारी गाड़ी निकल ऊपर से जावे ।।वह०।। ३ ।।

देरी हो गई नारी लौट नहीं आई, पति ने किया विचार कारण है काँई।
लख मूर्छित उसको वहाँ से लिया उठाई, फिर रक्त भरे लख वस्त्र ध्यान में आई।
सन्तान हुई पर नीचे कहीं गिर जावे ।।वह०।। ४ ।।

उपचार किया वह थोड़ी होश में आई, बोली बालक का मुख देवो दिखलाई।
जंजीर खेंचकर गाड़ी ली रुकवाई, सब घटना गार्ड को दीनी तब बतलाई।।
गिरा कहाँ यह पता नहीं हम पावें ।।वह०।। ५ ।।

यह ऊपर के आदेश बिना नहिं जावे, करके मेहनत आज्ञा झट मंगवावे।
इंजन डिब्बा साथ पुरुष ले जावे, लाँघे स्टेशन तीन पता नहीं पावे।।
संन्यासी टोली चली उधर से आवे ।।वह०।। ६ ।।

देख गाड़ी को ली उनने रुकवाई, बोले वापिस कैसे जा रहे भाई।
तब गार्ड ने दीनी सारी बात सुनाई, बालक तो है हम पास ऐसे दरसाई।।
कह करके वृत्तान्त उन्हें बतलावे ।।वह०।। ७ ।।

दोनों पटरी बीच पड़ा यह रोवे, सुन करके आवाज सभी दिशि जोवे।
जाकर देखा तो बाल नजर में आवे, कारण क्या यहाँ कौन इसे रख जावे ।।
अभी-अभी का जन्मा बाल मन भावे ।।वह०।। ८ ।।

चारों दिशि देखा कोई नजर नहीं आवे, उठा इसे हम जल लाकर धुलवावें।
पीत वस्त्र में रख छाती चिपकावे, तुमको जाते देख सोचा ये जावे ।।
अतः आपको कर संकेत रुकवावे ।।वह०।। ९ ।।

धन्यवाद दे उसे गोद में लीना, लाकर के सत्वर माता को दे दीना।
देख पुत्र को माँ का मन रंग भीना, उस आनन्द का तो जाय न वर्णन कीना ।।
सब देख पुत्र को मुख से शब्द सुनावे ।।वह०।।१०।।

दोहा :—जाको राखे साइयाँ, मारि सके नहिं कोय।
बाल न बांको कर सके, जो जग बैरी होय ।।

श्लोक :—अरक्षितं तिष्ठति दैवरक्षितं, सुरक्षितं दैवहतं विनश्यति।
जीवत्यनाथोऽपि वने विसर्जितः, कृतप्रयत्नोऽपि गृहे न जीवति ।। १ ।।

'प्राज्ञ' प्रसादे 'सोहन' मुनि चेतावे, कर लो सुकृत का काम अगर सुख चावे।
सुनकर घटना सुन्दर भाव बनावें, नर भव सम अवतार पुनः नहीं पावे ।।
धर्म साधना दुःख से वेग छुड़ावे ।।११।।

श्लोक का अर्थ :—

सुरक्षा के साधनों से वंचित व्यक्ति भाग्य से रक्षा पाया हुआ रह जाता है, जबकि चारों ओर से सुरक्षा बल से घिरा हुआ व्यक्ति भी भाग्य के बदल जाने से विनाश को पा लेता है।

वन में अनाथ की तरह रह रहा व्यक्ति भी जीवन पा लेता है पर घर में अतीव प्रयास करने पर भी (सभी साधनों की अनुकूलता होने पर भी) जीवित नहीं रह पाता है।

□□

प्रथम पुत्र के समय कभी कुछ दर्द हुआ स्तन के माँहीं।
नीरु पुत्र को दूध पिलाया दीनी घटना बतलाई ॥
सुनकर डॉक्टर बोला इसको रक्त सेर भर जो चाहे।
तभी जिन्दगी रह सकती है वरना है खतरा माँहे ॥
अहीर बोला मेरे तन से लोही देना चाहता हूं ॥१२॥कल०॥

कहता डाक्टर जवान-तन का लोही होना चहिये जी।
वह भी इनके नम्बर से ही पूरा मिलना चहिये जी ॥
देगा इतना खून कौन वह मरण शरण नहिं हो जावे।
डाक्टर बोला दवा खिलाने से फिर ताकत आ जावे ॥
बातें सुन कम्पोन्डर बोला, रक्त मैं देना चाहता हूँ ॥१३॥कल०॥

किन्तु इसके बदले दो सौ रुपये कीमत लेऊंगा।
मेरे जरूरत अभी दाम की बिन पैसे नहीं देऊंगा ॥
डॉक्टर कहे क्यों मजाक करता खून कहाँ से लावेगा।
मेरे तन में खून बहुत है ले लो फिर आ जावेगा ॥
दो सौ रुपये लेकर उनसे कहे खून दिलवाता हूँ ॥१४॥कल०॥

लिया रक्त और मिल गया नम्बर, उनके तन में चढ़ा दिया।
चंद दिनों में स्वस्थ हो गई मानों नूतन जन्म लिया ॥
प्रसन्न होकर अहीर ने भी सबको ही उपहार दिया।
वापिस अपने घर पर जाकर असम ओर प्रस्थान किया ॥
मिलनें वालों से वह कहता अपनी बात सुनाता हूँ ॥१५॥कल०॥

अच्छा योग मिला औषध का स्वस्थ हुई साता पाई।
नहीं मिलता यदि योग समझता नारी अब मेरी नाँही ॥
जैसे खून की जरूरत थी तो देने वाला था वहाँ ही।
अपने तन का सेर रक्त दे भला कर गया वह भाई ॥
कहाँ तक उसकी करूँ प्रशंसा मैं तो गुण नित गाता हूँ ॥१६॥कल०॥

इतने में आ पोस्टमैन ने यों आवाज लगाई है।
जल्दी ले लो आप नाम की चिठ्ठी कहीं से आई है ॥
इसके साथ मनीआर्डर भी आप नाम पर आया है।
कितने का है ? पोस्टमैन ने एक सहस बतलाया है ॥
सोचे इतने दाम कहाँ से आये पता न पाता हूँ ॥१७॥कल०॥

पत्र खोलकर पढ़ने बैठे देख रहा ऊपर का नाम।
पूज्य पिताजी ! माताजी ! मैं बारम्बार करूँ प्रणाम ॥
पूर्ण स्वस्थ होंगी माताजी देता हूं परिचय तमाम।
रक्तदाता 'नीरु का बेटा' करता कम्पोन्डरी का काम ॥
पाला पोसा पुत्र आज मैं अपनी बात सुनाता हूं ॥१८॥कल०॥

रुपये लेकर रक्त दिया था उसका कारण लिखूं तमाम।
बिन पैसे यदि देता खून तो आप पूछते मेरा नाम॥
मेरा परिचय पा लेने पर, कभी न करते ऐसा काम।
रक्त अभाव में कभी न होता मातृ घाव में वो आराम॥
यही समझ कर रुपये लीने बात यथार्थ बताता हूं॥१९॥कल०॥

पत्र साथ में हजार रुपये आप पास में भेज रहा।
इसमें दो सौ रुपये आपके शेष आठ सौ बचत रहा॥
यह रुपये मुझ माता के हित भोजन पथ्य में आवे काम।
बना बहाना लौटा दिये तो समझें मेरा काम तमाम॥
पुत्र आपका देह तज देगा सत्य-सत्य बतलाता हूं॥२०॥कल०॥

एक बात मैं और सुनाता रहे आपके दिल अन्दर।
पवित्र रहा है मेरा तन यह शुद्ध आपका अन्न खाकर॥
उसके बाद यहाँ आकर भी रहा अखाद्य से देह बचाय।
वही खून माता को दीना हर्षोल्लासित हो मन माँय॥
मद्य, माँस, ताड़ी, लहसुन, अरु, प्याज कभी ना खाता हूं॥२१॥कल०॥

बिठा आपने ज्ञान दिया था, उसी ग्रंथ को पढ़ता हूं।
अशुद्ध भाव कैसे हों मेरे शिक्षा आपकी रटता हूं॥
पढ़ते ही कागज दम्पत्ति के वह निकली अश्रुधारा।
बार-बार पढ़ते ही रहते, इसमें भेद लिखा सारा॥
पालित प्यारा पुत्र आपका 'अहमद बख्श' कहाता हूं॥२२॥कल०॥

-: अहीर पिता का प्रत्युत्तर :-

मानस पुत्र! अहमद! हम दोनों दे रहे तुमको आशीर्वाद।
कहूं कहाँ तक प्यारे लाला! आती थी हमको भी याद॥
किन्तु सूचना नहिं होने से पाते दिल में वहुत विषाद।
पत्र यकायक पाकर तेरा आया दिल में परमाल्हाद॥
अत्र कुशल, तव कुशल सदा मैं नेक ईश से चाहता हूं॥२३॥कल०॥

तेरा लिखना सत्य पुत्र मैं परिचय वहां लेता सारा।
विन पैसे दे कौन खून को यही समझता कोई प्यारा॥
वैसे भी यदि देता खून कोई उनको भी पैसे देता।
होता परिचय तेरा हमको हरगिज खून नहीं लेता॥
जीवन तेरा सात्विक लखकर फूला नहीं समाता हूं॥२४॥कल०॥

तू ईश्वर का वन्दा है यह पढ़कर हो गया हर्ष विभोर।
इससे वढ़कर पिता, पुत्र की क्या सुनना चाहेगा और॥
जाके होटलों में खाते हैं अंडे मच्छी पीवे शराव।
कई नशीली खाते पीते वैश्याओं से होय खराव॥
उन भक्तों से पावन तुम हो सदा नेक ही चाहता हूं॥२५॥कल०॥

अहो ! पुत्र ! हम तुझ सा सुत पा जीवन सफल समझते हैं ।
सार्थक हो गया दूध पिलाना ऐसा मन में रखते हैं ।।
अभी हमारे इन रुपयों की किंचित भी थी चाह नहीं ।
जरूरत होती तभी मंगाते दिली भावना साफ यही ।।
किन्तु तुम्हारा दिल न दुखाना यही सोच रख लेता हूं ।।२६।।कल०।।

मातृदुग्ध के ऋण से बेटा कभी उऋण नहीं हो पाये ।
हजार भवों में दे बदला यह बड़े पुरुष कहते आये ।।
किन्तु पुत्र तुमने तो सचमुच भारी एक कमाल किया ।
इसी जन्म के पय का कर्जा इसी जन्म में चुका दिया ।।
तुमसा पुत्र सभी जन पायें यही भावना भाता हूं ।।२७।।कल०

लिखने वाले प्यारे बेटे ! हम दोनों हैं मात-पिता ।
चिरंजीव हो युग-युग तक तुम दिल से कहें हम मात-पिता ।।
'प्राज्ञ' प्रसादे 'सोहन मुनि' कहे विनीत पुत्र की सेव करे ।
केवल पुत्रवान से क्या जो नित्य नयन से अश्रु झरे ।।
पिता सामने मूँछ तान कहे हिस्सा अभी बँटाता हूं ।।२८।।कल०।।

तन मन धन से सेवा कर लो मात-पिता फिर मिले कहाँ ।
जितना लालन पालन कीना कुछ तो कर लो याद यहाँ ।।
जिनके प्रताप से योग्य हुआ है उनके सन्मुख अकड़ रहा ।
चंद समय में यही सामने आयेगा तब छिपे कहाँ ।।
फिर रोवेगा, पछतावेगा, साफ-साफ जतलाता हूं ।।२९।।कल०

दु:ख देने से दु:ख पावोगे सुख देने से सौख्य महान् ।
जैसा करोगे वैसा भरोगे 'प्राज्ञ गुरु' का यह फरमान् ।।
दो हजार तैंतीस साल की चैत वुदी दशमी शनिवार ।
मदनगंज में चलकर आये हरी[1] दुर्ग से करी विहार ।।
सेवा करके लाभ उठालो बार-बार चेताता हूं ।।३०।।कल०।।

१- किशनगढ़

२३ | मनुष्य भव : बावन्ना चंदन

[तर्ज : सीता माता की गोदी में]

समझो मानव भव सा जीवन और न पावना जी।
करलो उत्तम काम नहीं तो क्षय हो जावना जी ।। टेर ।।

नगरी 'सलीलावंती' जानो, वहां का 'भूमिपति' राजानो।
समझे रैयत प्राण समानो ।।
अहो निशि करता कर से दान, मान अति पावना जी ।। १ ।।

एक दिन राजा घूमने काज, शृंगारित कर निज हयराज[1]।
संग में सैनिक सज कर साज ।।
जा रहे जंगल में महाराज, हृदय हरसावना जी ।। २ ।।

आता देखा एक भुजंग, चमका घोड़ा तजकर संग।
वायु सम वह जाय अभंग ।।
'भूमिपति' भी होकर तंग—अति घबरावना जी ।। ३ ।।

कहां पर ले जा कर हय डारे, कैसी मौत से मुझको मारे।
महीपति मन में एम विचारे ।।
होना होगा सो ही होय—यही हुई भावना जी ।। ४ ।।

आगे बड़ का तरु एक आया, दिल में कुछ संतोष समाया।
पकड़ूँ हिम्मत यों मन लाया ।।
करके हिकमत वहाँ महाराया, सत्वर थामना जी ।। ५ ।।

वल्गा[2] तजी अश्व रुक जावे, नीचे उतर कर हय घूमावे।
चंद समय विश्राम लिरावे ।।
हो गया तभी भारी के काज भील का आवना जी ।। ६ ।।

फटे पुराने तन पर चीर, हाड़-हाड़ दिख रहा शरीर।
साधन विन हो रहा अधीर ।।
देखा नरपति ने यह हाल-दया दिल लावना जी ।। ७ ।।

महाराजा ने किया विचार, दुःख से हो जावे यह पार।
ऐसा कर दूँ मैं उपचार ।।
ऐसा सोच बुला कर पास उसे समझावना जी ।। ८ ।।

१- घोड़ा
२- लगाम

धर्म कर्म सब छोड़ यहाँ पर जैसा है करना होगा।
बुद्ध देव ही परम देव है उनके पथ चलना होगा ॥१३॥

हो गया प्रथम ही भेद हृदय में सती सुभद्रा यों सोचे।
यहाँ परीक्षा होगी मेरी ऐसा दिल में आलोचे ॥१४॥

नहीं नियम को त्यागूँगी मैं चाहे प्राण भले जावे।
घर धन्धे से निपट सती वहाँ धर्म ध्यान में लग जावे ॥१५॥

सास ननंद घर वाले सारे सति से द्वेष सदा रखते।
इनकी लखकर धर्म साधना हरदम मन माँही जलते ॥१६॥

एक समय जिन कल्पी मुनिवर भिक्षा लेने को आये।
देख नेत्र में फूस मुनि के सती हृदय में यों लाये ॥१७॥

युक्ति कर जिह्वा से उसने मुनि का फूस निकाल लिया।
ललाट बिन्दी लगी मुनि के, नहीं सती ने ध्यान दिया ॥१८॥

सास नणंद ने हल्ला करके मुनि को कलंक लगाया है।
व्यभिचारण है बहू सुभद्रा वारम्बार सुनाया है ॥१९॥

अपने पर और धर्म गुरु पर मिथ्या कलंक लगाया है।
तभी सती ने अनशन करके देव जिनेश्वर ध्याया है ॥२०॥

तीजे दिन की मध्य निशा में अमर चरण में चल आया।
शीश झुका कर कहे सती से अब सब दु:खड़ा बिरलाया ॥२१॥

चंपा के चारों दरवाजे वन्द हुए, नहीं खुल पाये।
देख व्यवस्था सभी नगर के मानव गण अति घबराये ॥२२॥

देव कहे :—हे नगर वासियों! सुनो ध्यान देकर सारे।
सतीत्व जिसका पक्का हो वह कूँएँ से जल नीकारे ॥२३॥

कच्चे धागे से छलनी को बाँध कूप में जो डारे।
उस जल को छिड़के द्वारों पर सद्य खुलेंगे ये सारे ॥२४॥

जो जो निज को सती समझती, कूप पास में चल आई।
किंतु जल नहीं निकाल सकीं वे पुन: लौटती शरमाई ॥२५॥

कही सास से बात सुभद्रा आज्ञा मुझको दे दीजे।
जाकर द्वार खोल दूँ वहाँ मैं इतना सा यश ले लीजे ॥२६॥

सुनकर सासू भड़क उठी बस! रहने दे तू सती महान्।
कुकर्मों का पार नहीं है बिगड़ जायगी वहाँ पर शान ॥२७॥

क्या हमको शर्मायेगी, बदनाम करेगी या हमको।
रहने दे तू इस सतीत्व को सारा जग जाने तुमको ॥२८॥

फिर भी उस ने कहा सास को असल नकल का पता लगे ।
आज्ञा चाहती हूं जाने की, मेरे दिल में भाव जगे ॥२९॥
देख सती का विशेष आग्रह आज्ञा सासू ने दीनी ।
जैसी देव की आज्ञा थी वह वैसी वहाँ पर कर लीनी ॥३०॥
कच्चे धागे से छलनी में सलिल निकाला तत्काले ।
खड़-खड़ करते द्वार खुले जिस-जिस पर वह पानी डाले ॥३१॥
देव कहे एक द्वार बंद है नहीं कोई यह कह पावे ।
यदि उपस्थित हो तो यहां पर द्वार खोलती घर जावे ॥३२॥
देव दुन्दुभी बजी गगन में धन्य-धन्य जयकार हुई ।
पुष्प वृष्टि कर देव चरण नम सती शील महिमा गाई ॥३३॥
सास ससुर ने आकर सती से क्षमा याचना कीनी है ।
हम अज्ञानी जान सके नहीं कई व्यथाएँ दीनी हैं ॥३४॥
सती नमन कर कहे सभी से कहीं आपका दोष नहीं ।
उदय हुआ कर्मों का मेरे अतः आप पर रोष नहीं ॥३५॥
उस दिन से सब समझ गये यों गलती हमने की भारी ।
उलझ गये मिथ्यात्व दशा में सुलटी को उलटी धारी ॥३६॥
तब से सब ने सती सामने, मिथ्या मत का त्याग किया ।
सच्चा मारग है जिनवर का ऐसा दिल में धार लिया ॥३७॥
सती प्रभावे सब ही परिजन धर्म ध्यान को अपनावे ।
रात्रि भोजन कंद मूल तज दुर्व्यसनों को छिटकावे ॥३८॥
मिथ्या आल मिटा है कैसा शील प्रभाव सुनो नर नार ।
शुद्ध भाव से धारे उसका सफल बनेगा नर-अवतार ॥३९॥
'प्राज्ञ' प्रसादे 'सोहनमुनि' कहे शील मुक्ति का है सोपान ।
अपनालो अक्षय सुख चाहे वीर प्रभु का यह फरमान ॥४०॥
दो हजार चौंतीस मास वैसाख सुदी पांचम शनिवार ।
अजयमेर महावीर कोलोनी यह चारित्र किया तैयार ॥४१॥

२५ दुःखदायी दुष्टों का संग

[तर्ज : तावड़ा धीमो तो पड़जा रे]

कर्म मत बांधो नर नारी जी ।
आपस माँही लड़ा भिड़ा क्यों खोलो नरक द्वारी ॥ टेर ॥

बात बनाकर मन की ईर्ष्या, बाहर नीकारी-सज्जनों-
बिन कारण ही द्वेष भाव ला बन गये दुःखकारी ॥ १ ॥कर्म०॥

सालमपुर में सेठ सालमचंद, काम चले भारी-सज्जनों-
सम्पत्ति अच्छी घर के माँही जीवन सुखकारी ॥ २ ॥कर्म०॥

गृह देवी है "रमा" रमा सम, पति को हितकारी-सज्जनों-
आन शान रख चाले कुल की धर्म ध्यान धारी ॥ ३ ॥कर्म०॥

'विमल' 'सबल' दो पुत्र सेठ के हैं आज्ञाकारी-सज्जनों-
सभी कला पढ़ घर पर आये जन-जन प्रियकारी ॥ ४ ॥कर्म०॥

विवाह हुआ घर बहुएं आईं, किया मंगलाचारी-सज्जनों-
सेठ सेठाणी हो आनन्दित दान किया भारी ॥ ५ ॥कर्म०॥

मुँह लगा एक मित्र सेठ का अति चाटूकारी-सज्जनों-
जैसा अवसर होवे वैसा बोले हरबारी ॥ ६ ॥कर्म०॥

सेठ साहब भी समझे उसको, अपना हितकारी-सज्जनों-
किन्तु उसके भरी हृदय में विष कुंभी भारी ॥ ७ ॥कर्म०॥

सेठ सेठाणी काल कर गये, पुत्रों ने धारी-सज्जनों-
अलग-अलग हिस्सा कर लेवें घर सम्पत्ति सारी ॥ ८ ॥कर्म०॥

किया बराबर बँटवारा मिल, धीरज मन धारी-सज्जनों-
हिस्से बाद में एक बाटकी रही चमत्कारी ॥ ९ ॥कर्म०॥

ज्येष्ठ भ्रात ने लघु भाई को, दे दी उन बारी-सज्जनों-
दोनों का व्यापार अलग बाजार मांय जहारी ॥१०॥कर्म०॥

लघु बंधव के पूंजी बढ़ रही, लाभ हुआ भारी-सज्जनों-
ख्याति हो रही स्थान-स्थान पर माने व्यापारी ॥११॥कर्म०॥

बड़े भ्रात के क्षीण हुआ धन, घटी दुकानदारी-सज्जनों-
सोचे क्या कारण है जिससे सम्पत्ति गई म्हारी ॥१२॥कर्म०॥
सेठ मित्र भी मौका पाकर, आया उस वारी-सज्जनों-
विमल शाह ने अपना मानकर बात कही सारी ॥१३॥कर्म०॥
सुनते ही सोचे यों मन में, अवसर गुणकारी-सज्जनों-
लड़ा परस्पर मजा देख लूँ यों दिल में धारी ॥१४॥कर्म०॥
क्या कहूं तुझको एक बात की, भूल करी भारी-सज्जनों-
शुभ शकुनों की वही बाटकी दे दी अविचारी ॥१५॥कर्म०॥
वापिस मांग, नहीं देवे तो, नालिश[1] सरकारी-सज्जनों-
कोर्ट कचहरी करके ले ले वस्तु है थांरी ॥१६॥कर्म०॥
लघु भ्राता से गया माँगने, नहीं दी उस वारी-सज्जनों-
दोनों भाई लड़े कचहरी जीते कौन हारी ॥१७॥कर्म०॥
सम्पत्ति थी लाखों की घर में, खो दीनी सारी-सज्जनों-
अब तो ऐसी स्थिति हो गई बन गये भीखारी ॥१८॥कर्म०॥
दुष्ट स्वभावी देख तमाशा, हर्षित हुआ भारी-सज्जनों-
किन्तु नहीं सोचे कुछ मन मे क्या गति हो म्हारी ॥१९॥कर्म०॥
ऐसे ही नर मर कर पाते, दुर्गति दुखकारी-सज्जनों-
पश्चाताप करे भव-भव में दुःख पावे भारी ॥२०॥कर्म०॥
दुष्टों की संगत को छोड़ो, धोखा दे भारी-सज्जनों-
ऊपर से होते हैं मीठे अंदर विष भारी ॥२१॥कर्म०॥
'प्राज्ञ' प्रसादे 'सोहन' मुनि कहे, सुणज्यो नर नारी-सज्जनों-
दो हजार तैंतीस होलिका, कीनी तिहारी[2] ॥२२॥कर्म०॥

१- सरकारी दावा
२- तिहारी ग्राम (अजमेर जिले में)

२६ | बुद्धि की विजय

दोहा :—वर्धमान के जाप से, पावे सब ही सिद्धि।
घर में सुख सम्पत्ति की, दिन-दिन होवे वृद्धि ॥

[तर्ज : छोटी लावणी]

होवे यश वृद्धि सदा, बुद्धि से भाई, इस मानव ने भी विजय बुद्धि से पाई ॥ टेर ॥

है पृथ्वीपुर में भूपति अरी जितारी, वह प्रजाजनों का रखता ध्यान हर बारी।
एक रहता है सरदार वहाँ बलकारी, है चार पुत्रों की जोड़ बुद्धि के धारी ॥
शत, सहस्र, लक्ष, अरु कोटि बुद्धि है भाई ॥इस०॥ १ ॥

एक वक्त परस्पर चारों भ्रात विचारी, त्याग गाँव को चले विदेश मंझारी।
वहाँ बुद्धि बल की होगी वृद्धि सुखकारी, यों सोच पिता से कह दी बात आ सारी ॥
आज्ञा पाकर चले चार ही भाई ॥इस०॥ २ ॥

बैठ अश्व पर जा रहे मारग मांही, वहाँ देख ऊंट का पैर एक दरसाई।
यह पैर ऊंटणी का है, ऊँट का नाँही, तब कहे दूसरा काणी ऊँटणी भाई ॥
तब तीजा बोला असवार दम्पत्ती भाई ॥इस०॥ ३ ॥

फिर चौथा बोला गर्भवती है बाई, जा करें परीक्षा चारों के मन आई।
अधिक दूर नहीं गया, मिलेगा यहाँ ही, यों सोच सद्य ही अश्व दिये दौड़ाई ॥
मिले वहीं हम निर्णय लेंगे पाई ॥इस०॥ ४ ॥

ऊँटणी सवार भी डाकू समझ दौड़ावे, घुस गये नगर में हाथ नहीं वे आवे।
जा पद्म शहर में हल्ला खूब मचावे, मुझे लूटने डाकू दल यहाँ आवे ॥
तब भूप सन्तरी भेज खोज करवाई ॥इस०॥ ५ ॥

ठहर गये सर तट पर चारों भाई, देख उन्हें सब पता साफ लिया पाई।
फिर भूप सामने आकर बात सुनाई, सम्मान सहित लिया भूप पास बुलवाई ॥
खान-पान का दिया प्रबंध कराई ॥इस०॥ ६ ॥

दूजे दिन चारों सभा बीच जब आवे, नृप भेज सन्तरी सेठ को सद्य बुलावे।
नृप कहे सेठ क्यों तुम पर यों शंकाये, तब चारों भाई अपनी बात बतावे ॥
सुन नरपति पूछे कैसे आप बताई ॥इस०॥ ७ ॥

पहला कहे पेशाब देख लिया जानी, कहे दूसरा चरने से कही काणी।
कहे तीसरा राह में देख निशानी, निशंक भाव से दम्पत्ति को पहिचानी ।।
कर टेक उठी सो गर्भवती दरसाई ।।इस०।। ८ ।।

तब कहे सेठ ये सभी सत्य बतलाई, सुनकर के सारी सभा गई चकराई।
धन्य-धन्य दिया लोक सभी हरखाई, नहीं देखे ऐसे बुद्धिशाली जग माँही ।।
हो रही प्रशंसा गहरी सभा के माँही ।।इस०।। ९ ।।

लखकर के अनुपम बुद्धि भूप फरमाई, तुम रहो ड्योढ़ी पर चारों पहरे ताँई।
इक इक पहर का पहरा देवें लगाई, वेतन भी आपको मिले यहाँ मन चाई ।।
रह गये वहाँ पर चारों हर्ष मन लाई ।।इस०।।१०।।

प्रथम प्रहर शत बुद्धि पहरा लगावे, एक दिन पहरा देते नजर में आवे।
एक महा भयंकर सर्प महल में जावे, सीधी दृष्टि राणी की ओर लगावे ।।
यह देख पड़ा वह असमंजस के माँही ।।इस०।।११।।

राजा राणी सोते नींद के माँही, अन्दर जाने का हक मेरा है नाँही।
किन्तु अभी का समय रहा बतलाई, नहीं जाने से हो राणी घात दुःखदाई ।।
सोच त्वरित ही गया महल के माँही ।।इस०।।१२।।

खुले न निद्रा यही ध्यान रख जावे, कर युक्ति शीघ्र बरतन से सर्प ढ़क आवे।
बाहर निकलते भूप नींद खुल जावे, दृष्टि में जाता शत बुद्धि आ जावे ।।
नृप ने सोचा अन्दर क्यों गया आई ।।इस०।।१३।।

यहां दाल में काला कुछ दिखलावे, भूपति के दिल में गहरी शंका आवे।
कुछ भी कारण नहीं और नजर में आवे, चोर जार यह पुरुष साफ दिखलावे ।।
हो गया पहर शत बुद्धि गया सिधाई ।।इस०।।१४।।

सहस्र बुद्धि जब पहरा देने आवे, आते ही भूपति उनको यों फरमावे।
शत बुद्धि का शिर काट यहाँ पर लावे, हुक्म मेरा यह जाकर अभी बजावे ।।
सहस्र बुद्धि सोचे यों विस्मय लाई ।।इस०।।१५।।

चला वहाँ से सीधा स्थान पर आवे, गहरी नींद में सोता उसको पावे।
है निशंक यह मन में खौफ न पावे, किस कारण से फिर भूप इन्हें मरवावे ।।
होगी शंका सोच पुनः गया आई ।।इस०।।१६।।

पूछे भूप तब सहस्र बुद्धि दरसावे, सोते पर क्षत्री कभी न शस्त्र चलावे।
जगने पर ललकार के शीश उड़ावे, यही क्षत्री का धर्म शास्त्र बतलावे ।।
असंतुष्ट देखकर नृप को कथा सुनाई ।।इस०।।१७।।

एक शहर में रहता वणिक विहारी, जिनके है घर में कंचन नामा नारी।
सरल विदुषी रखती अति हुशियारी, पशुपक्षी नर भाषा समझे सारी ।।
श्रृगाल बोल रहे मध्य रात के माँही ।।इस०।।१८।।

एक कहे भूपाल काल मर जासी, कहे दूसरा उपाय किये बच जासी।
सरिता से शव को निकाल कोई ले आसी, शव देकर हमको भूषण जो ले जासी॥
तो समझो नृप का बिगडेगा कुछ नाँही॥इस०॥१९॥

सुन मध्य रात में सेठाणी झट चाली, उधर सेठ ने जाते उसे निहाली।
कहाँ जा रही जाकर लूँ मैं भाली, गुप्त तरीके सिर पर कंबल डाली॥
नारी जा रही पति को पता है नाँहीं॥इस०॥२०॥

सरिता तट पर खड़ी करे इन्तजारी, शव वहता आया नदी माँही उस वारी।
हिम्मत करके लीना उसे निकारी, भूषण लीने खोल दिया शव डारी॥
पति घटना देखी सोचे यों मन मांही॥इस०॥२१॥

मुझ नारी यहाँ पर मुर्दों को आ खाती, मुझसे भी छिप कर नित्य यहाँ आ जाती।
लखकर इसके कार्य छाती थर्राती, ऐसे यह डायण कभी मुझे खा जाती॥
हुआ रवाना सोया भवन के माँही॥इस०॥२२॥

पीछे से आई नार द्वार बंद पावे, सो गई मकाँ के बाहर रात बीतावे।
जल्दी जग कर सेठ यों दिल में लावे, कर दूँ जाहिर लोग सजग हो जावे॥
मुझ नारी डाकण दीना शोर मचाई॥इस०॥२३॥

कही भूप से बात नाथ ! सुण लीजे, मैं देखी आँखों सब सच्ची समझीजे।
स्त्री खाती है नर देह ध्यान कुछ दीजे, मंगवा कर उसको मृत्यु दंड दे दीजे॥
सुन करके नृप ने आज्ञा यों फरमाई॥इस०॥२४॥

पकड़ उसे दो शूली सद्य चढ़ाई, सुनो न किसकी बात नाथ फरमाई।
कोतवाल जा बांध मुस्कियाँ लाई, शूली चढ़ाने ले जा रहा उस ताँई॥
सुने न उसकी कोई बात सुनाई॥इस०॥२५॥

हो रही शूली तैयार अभी चढ़वावे, इतने में बोला काग सुनो चित्त चावे।
इस वृक्ष मूल में रत्न कलश दिखलावे, सुनकर हँस दी नार मुझे क्यों सुनावे॥
तुम भाषा ने ही खड़ा किया यहाँ लाई॥इस०॥२६॥

हँसती लखकर कोतवाल वहाँ आवे, क्या कारण है हँसने का मुझे बतावे।
वह बोली—अगर नृप मेरी सुनना चावे, मैं दूंगी सारा भेद सामने आवे॥
कोतवाल ने नृप को लिया बुलाई॥इस०॥२७॥

आया भूप तब नार उन्हें दरसावे, किस कारण मुझको शूली आप चढ़ावे।
तब भूपति उसको पति की बात बतावे, सुनकर के समझी बात ध्यान में आवे॥
नृप पूछे क्यों तुम हँसी देवो बतलाई॥इस०॥२८॥

बीतक घटना नृप को दी बतलाई, सुन बोला क्या विश्वास कथन के मांही।
मैं पशु पक्षी की भाषा जानूँ सारी, जो कहा काग ने दीनी बात सुनाई॥
कारण से ही हँसी मुझे यहाँ आई॥इस०॥२९॥

क्या भाषा विज्ञ होना भी बुरा कहावे, इस भाषा ज्ञान से आप मुझे मरवावें।
अब आप करो विश्वास भूमि खुदवायें, यहाँ गड़ा हुआ है रत्न कलश निकलावें॥
दे आज्ञा नृप ने त्वरित भूमि खुदवाई॥इस०॥३०॥

निकल गया वहाँ रत्न कलश उस बारी, लख करके भूपति विस्मय पाया भारी।
सच्ची कह रही बात सभी यह नारी, बिन कारण दीना कष्ट भूल की भारी॥
मैं भी हूं दोषी दीना न्याय भुलाई॥इस०॥३१॥

इसके पति ने मिथ्या बात सुनाई, प्रजा सामने नृप ने करी सफाई।
क्षमा मांग कहे क्षमा करो हे बाई! है मुझ पर पर तुम उपकार करी है भलाई॥
बुला पति को दिया भेद समझाई॥इस०॥३२॥

निज गलती कर स्वीकार पति शरमावे, नृप बना धर्म की बहिन स्थान पहुंचावे।
ऐसी शंका कर व्यर्थ कष्ट पहुंचावे, बदला पहरा लक्ष बुद्धि वहाँ आवे॥
उसको भी नृप ने वही आज्ञा फरमाई॥इस०॥३३॥

उसी तरह वह जाकर वापिस आया, उसने भी वो ही कह वृत्तान्त सुनाया।
सन्तोष भूप के दिल माँही नहीं आया, तब कहे कथा वह सुनो आप महाराया॥
बिन निर्णय कैसे अनर्थ हो जग मांही॥इस०॥३४॥

सरदारसिंह नृप योधा था बलकारी, उमराव मुसद्धी सब थे आज्ञाकारी।
अष्टांग निमित्त का ज्ञाता शुक गुणधारी; वह सबसे ज्यादा नृप को है प्रियकारी॥
मानव भाषा में देता बात सुनाई॥इस०॥३५॥

जब तब भी मिलता समय भूप वहाँ आवे, तोते से करके वात अति हरपावे।
एक दिन करते वात नजर में आवे, उड़ रहा मेरा परिवार हिये दुःख पावे॥
मैं था स्वतन्त्र पर पड़ा कैद में आई॥इस०॥३६॥

आँसू आँख में देख भूप फरमावे, किस कारण आये आँसू मुझे वतलावे।
शुक कहे आज परिवार दृष्टि में आवे, उन्हें देख मुझ नयनों नीर भरावे॥
करके दया नृप दीना हुक्म फरमाई॥इस०॥३७॥

वारह मास की छुट्टी दूं इस वारी, परिवार साथ में घूमों तुम हर वारी।
रहो मोद में सदा रखो हुशियारी, आजाना पूरी मुद्दत होते थाँरी॥
कर नमन मिला परिवार जनों से आई॥इस०॥३८॥

परिजन से मिलकर मन में आनंद पाया, रहा प्रसन्न चित्त पूरा वर्ष विताया।
आते वक्त एक गुठली आम की लाया, जिसको खाने से बूढ़ा हो युवराया॥
पुनः लौट स्वामी से मिला हरसाई॥इस०॥३९॥

गुठली का सब दीना भेद वताई, सुन नरपति हरसा अपने मन के माँही।
नहीं होऊँ बूढ़ा रहूँ जवान सदाई, खाऊँ खिलाऊँ फल इसका सुखदाई॥
वागवान को वुला दिया समझाई॥इस०॥४०॥

रखना पूरा ध्यान आम लग जावे, तव सवसे पहला लाकर मुझे खिलावे।
मैं दूँगा खूव इनाम बात दरसावे, लाकर माली उपवन में उसे लगावे॥
समय-समय पर करता खूव सिंचाई ॥इस०॥४१॥

आम पके तव माली गाँव कहीं जावे, अपनी नारी से बात सभी समझावे।
पक्का फल यदि कहीं नजर में आवे, ले उसे सुरक्षित अपने पास रखावे॥
वापिस आते ही दूँगा नृप को जाई ॥इस०॥४२॥

पीछे नारी कर रही है रखवाली, किंतु काम वस वह भी गई कहीं चाली।
पक्का आम एक गिरा टूट तत्काली, आ सर्प देव ने उसमें विष दिया डाली॥
माली ने लाकर भेंट किया नृप ताँई ॥इस०॥४३॥

जो गुठली तोता अपने संग में लाया, उसके ही फल को देख भूप हरसाया।
तव मंत्री वोला सुनो आप महाराया, आम्र वृक्ष का पहला फल यह आया॥
दे पहली वस्तु गुरु दक्षिणा माँही ॥इस०॥४४॥

वह आम पुरोहित जी के कर में दीना, वडे हर्ष के साथ उन्होंने लीना।
लाकर घर में आधा नार को दीना, खाते ही दोनों राम शरण कर लीना॥
सुनी वात नृप मन में ग्लानी छाई ॥इस०॥४५॥

यह तो है विष वृक्ष पोपट छल कीना, यह देख भूप ने शुक को मरवा दीना।
था वहाँ का मंत्री वृद्ध दु:ख से भीना, गृह झंझट से गया ऊव व्यर्थ मम जीना॥
विप फल को खाने गया वाग के माँही ॥इस०॥४६॥

फल खाते ही वह युवा हुआ क्षण माँही, तव गई क्षीणता आई शक्ति मन चाही।
सीधा वह चलकर आया राज के माँही, देख उसे नृप पूछे दवा क्या खाई॥
कैसे हो गये युवा कहो वतलाई ॥इस०॥४७॥

मंत्री कहे मैं गया मरण के तांई, आम्र वृक्ष विप जाण लिया मैं खाई।
वूढ़े का हो गया जवाँ देह पलटाई, सुनकर के नरपति चकित हुआ मन माँही॥
कर गलती मैंने शुक को दिया मरवाई ॥इस०॥४८॥

वुद्धि हुई विपरीत शोक नृप लावे, निर्णय विन मरवाय महा दु:ख पावे।
हो गया पहर जव पूर्ण चला वह जावे, चौथे पहर में कोटि वुद्धि चल आवे॥
उसको भी नृप ने वही वात फरमाई ॥इस०॥४९॥

आज्ञा पाकर गया देख फिर आवे, वह उसी तरह से सभी वात दरसावे।
सुन राजा मन में शान्ति नहीं कुछ पावे, तव कोटि वुद्धि भी अपनी वात सुनावे॥
विन सोचे करता काम होय दु:खदाई ॥इस०॥५०॥

एक भूप एकदा वन में घूमने जावे, सेना को आज्ञा देय साथ ले जावे।
चौगान अश्व पर नृपति वैठ घुमावे, अजगर को लखकर अश्व पवन हो जावे॥
नृप सोचे कहाँ पर डारेगा ले जाई ॥इस०॥५१॥

जब बहुत दूर एक बट के नीचे आवे, तब पकड़ शाख को तरु पर नृप लटकावे।
छूटी लगाम तब अश्व वहीं रुक जावे, झट नीचे आ नृप घोड़े को लौटावे।
भूपति को लग रही प्यास गया घबराई ।।इस०।।५२।।

इधर-उधर रहा देख प्यास के मारे, जो मिले कहीं जल प्राण रहे इस वारे।
बट तरु से गिर रही बूंद-बूंद सुखदारे, रख दिया बनाकर पात्र बंधी आशा रे।
भर जावे पात्र तब लेऊँ प्यास बुझाई ।।इस०।।५३।।

उस समय चील लख सोचे यदि पी जावे, पीते ही तत्काल भूप मर जावे।
मैं ऐसा करूँ उपाय नहीं पी पावे, लेते ही हाथ में एक झपट्टा लगावे।
गिर गया हाथ से पात्र बूंद नहीं पाई ।।इस०।।५४।।

लाल नेत्र कर देखे चील के तांई, किस भव का लीना वैर यहाँ पर आई।
भरा पात्र दिया ढोल पापिणी आई, ये रहे प्यास से प्राण मेरे मुरझाई।
अब के जो आ गई दूँगा प्राण गँवाई ।।इस०।।५५।।

दूजी वक्त भी भरा पात्र जल लीना, अवसर लख कर चील झपट्टा दीना।
अब के नृप ने बाण हाथ में लीना, और एक बाण में चील प्राण हर लीना।
इतने में ढूंढते सैनिक आ गये वहाँ ही ।।इस०।।५६।।

पानी पीकर राजा प्यास बुझाई, अब आये प्राण में प्राण जान बच पाई
कितना कीमती पानी है जग माँही, मूरख ना समझे देवे व्यर्थ बहाई
यह जल ऊपर से रहा कहाँ से आई ।।इस०।।५७।।

सुनते ही सैनिक तरु पर करे चढ़ाई, जाकर के देखा अजगर पड़ा खोह माँही
मुँह से गिर रही लार बूँद बन भाई, पृथ्वी पर पड़ रही मानो पयवत् आई
वापिस आ सैनिक ने वात सुनाई ।।इस०।।५८।।

सुनते ही नृप के चित्त में चिन्ता छाई, यह पात्र गिरा कर कीनी खूब भलाई
पर मैं अज्ञानी समझा कुछ भी नाँहीं, है कृतघ्न मुझ सा कौन जगत के माँही
उपकारी पर भी दीना बाण चलाई ।।इस०।।५९।।

बिन सोचे करके काम भूप पछताया, और वार-वार करे याद चील को राया
किन्तु पुनः नहीं जिये चील की काया, जो करे सोच कर काम वही सुख पाया
पहरा पूरण हुआ, सूर्य गया आई ।।इस०।।६०।।

भूप कार्य से निपट सभा में आया, आते ही पहले यह आदेश सुनाया
भेज सन्तरी शत बुद्धि बुलवाया, क्यों घुसा महल में पूछे यों महाराया
शत बुद्धि ने भी अपनी बात सुनाई ।।इस०।।६१।।

नहीं आता अंदर श्री राणी मर जाती, और आज राज में नजर उदासी आती
सर्प जहर से तन में नील छा जाती, मंत्र-तंत्र अरु दवा काम नहीं आती
चलो महल में देऊँ सभी दिखाई ।।इस०।।६२।।

सुन राजा मंत्री सभी साथ चल आये, देख महल में सर्प अति विस्माये।
महा भयंकर विषधर सही लखावे, यदि खा जावे तो मरण शरण हो जावे॥
नृप सोचे इसने राणी आज बचाई ॥इस०॥६३॥

उपकारी का कर नाश कहां मैं जाता, इस महापाप से मैं दुर्गति को पाता।
किन्तु कितने योग्य हैं इनके भ्राता, मुझे कलंक से बचा लिया यश दाता॥
इनके प्राणों को ये रख लीने भाई ॥इस०॥६४॥

सभा बीच में सबका मान बढ़ाया, निज बुद्धि बल से चारों ही यश पाया।
खुश होय भूप ने गहरा धन बक्षाया, फिर अलग-अलग चारों को गाँव दिलाया॥
चारों को अपने सम ही दिया बनाई ॥इस०॥६५॥

मात-पिता से मिलने वापिस जावे, मारग में मुनि को देख सभी हरसावे।
चारों भ्राता कर जोड़ शीश झुकावे, आज भला है दिवस दर्श हम पावे॥
मुनिवर ने उनको दिया धरम सुनाई ॥इस०॥६६॥

मनुष्य जन्म सा रत्न हाथ में आया, पूर्व जन्म में गहरा पुण्य कमाया।
मत खोवो व्यर्थ शुभ अवसर तुमने पाया, करो साधना भरो कोप फरमाया॥
चारों भ्राता बने श्रावक सुखदाई ॥इस०॥६७॥

मात-पिता से मिलकर आनंद पाया, सेवा करे दिल खोल हरस मन लाया।
धर्म ध्यान पालन में चित्त लगाया, कर करणी अन्त में अमर गति को पाया॥
धर्म साधना भव-भव में सुखदाई ॥इस०॥६८॥

'प्राज्ञ' प्रसादे 'सोहन मुनि' दरसावे, ले लो संबल साथ अगर सुख चावे।
स्वाध्याय ध्यान कर सम्यक ज्ञान बढ़ावे, वह मानव निश्चय अमर शांति को पावे॥
जिन वचनों पर श्रद्धा रखो सदा ही ॥इस०॥६९॥

□□

२७ | युधिष्ठिर-यक्ष संवाद

[तर्ज : नेमजी की जान बणी भारी]

धर्म पर दृढ़ रहते भाई-वही ले जग में यश पाई ।। टेर ।।

कथा महाभारत में आई-युधिष्ठिर पाँचों ही भाई ।
कष्ट से बनवासा मांहीं, बिता रहे अपने दिन वहाँ ही ।।
दोहा :—उस समय एक विप्र वहाँ, रोता-रोता आय ।
अरणी मथनी दोय लकड़ियें, हरिण आय ले जाय ।।
आग मैं लेता रगड़ पाई ।। १ ।।

यज्ञ का कारज कर लेता, करूँ क्या मुख से यों कहता ।
दीन बन वाणी दरसाता-छीन कर ला दो यह चाहता ।।
दोहा :—धार्मिक क्रियाएँ जो करूँ-सभी बंद हो जांय ।
लकड़ी बिन नहि काम चलेगा, अधर्म मुझ बढ़ जाय ।।
जाऊँ मर नरकों के माँही ।। २ ।।

दीन के वचन सुने वहाँ ही, चले है सत्वर सब भाई ।
पकड़ने को ही मृग ताँई, दौड़ रहे पाँचों जोश खाई ।।
दोहा :—दौड़ दौड़ते थक गये—मृग अदृश्य हो जाय ।
श्रम से भी तरबतर हो गये-पाँचों पसीने माँय ।।
बैठ गये वृक्ष तले आई ।। ३ ।।

प्यास से सब, ही घबराये-नकुल को धर्म फरमाये ।
खोज कर कहीं से जल लाये-प्यास तेरी भी बुझ आये ।।
दोहा :—तरु पर चढ़ कर देखते-बक उड़ते दिखलाय ।
अन्दाजे से चलकर आया-भरा सरोवर पाय ।।
हृदय में प्रसन्नता छाई ।। ४ ।।

ज्यों हि जल पीने बढ़ जावे-तभी अदृश्य शब्द आवे ।
प्रश्न का उत्तर बतलावे-बाद में पानी पास जावे ।।
दोहा :—उत्तर दिये बिन जल पिया-समझो मृत्यु आय ।
सुनी बात अनसुनी नकुल कर-जल को लिया उठाय ।।
लगाते मुँह के गिरा भाई ।। ५ ।।

लौट कर नकुल नहीं आया-पंडित सहदेव को भिजवाया ।
उसी सम वह भी मूर्छाया, धनुर्धर अर्जुन वहाँ आया ॥
दोहा :—वह भी वहीं पर गिर गया वापिस कौन सिधाय ।
नहीं आने पर धर्मपुत्र के चिंता चित्त में छाय ॥
भीम को जल्दी दरसाई ॥ ६ ॥
गया सो वापिस ही नहिं आय-पता तू लगा उन्हें ले आय ।
पानी से प्यास बुझाकर आय-मेरें हित जल भी भरकर लाय ॥
दोहा :—भीम खोजते आ गया-देखा उनका हाल ।
वह भी जल को पीने लागा-उसका भी वही हाल ॥
सोच रहा धर्म हिए माँही ॥ ७ ॥
कारण क्या देखूँ वहाँ जाई-खोजते वे भी गये आई ।
मरण लख गये जो घबराई-तभी आकाश वाणी आई ॥
दोहा :—इनको मैंने मृत्यु दी-सुनो लगा कर ध्यान ।
मेरे प्रश्न का उत्तर दिये बिन, जल मत छूना आन ॥
वात नहीं मानी तुम भाई ॥ ८ ॥
यदि तुम जल पीना चावो, प्रश्न के उत्तर दिलवावो ।
नहिं तो यही गति पावो-शंका मत दिल माँही लावो ॥
दोहा :—वाणी कहाँ से आ रही-देवो मुख दिखलाय ।
उसके वाद ही यथामति मैं, दूँगा उत्तर सुनाय ॥
वात सुन यक्ष हिए लाई ॥ ९ ॥
स्वयं यम यक्ष वन आये, परीक्षा लेना ही चाये ।
धर्म के भाव किते पाये-हरिण को छलकर यहाँ लाये ॥
दोहा :—नमस्कार कर धर्म ने, कहा प्रश्न फरमाय ।
प्रश्न अनेकों पूछे यक्ष ने-उत्तर धर्म दिलाय ॥
प्रश्नोत्तर नीचे दरसाई ॥१०॥
धनों में उत्तम धन बतलाय ? शास्त्र का ज्ञान श्रेष्ठ कहलाय ।
जगत में श्रेष्ठ धर्म है क्याय ? लोक में श्रेष्ठ दया बतलाय ॥
दोहा :—उत्तम दया किसको कहूँ ? सब का ही सुख चाय ।
किसकी मित्रता नष्ट न होती ? सज्जन से की जाय ॥
पृथ्वी से भारी क्या भाई ॥११॥
माता का गौरव है भारी ! कौन अरि दुर्जय दुःखकारी ।
क्रोध ही शत्रु जग जहारी, मुर्खा है कौन कहो सारी ॥
दोहा :—जिनके सिर पर ज्ञान नहीं, वही मुर्खा जग मांय ।
आश्चर्य भारी क्या है कहु तो, जो निज मरण भुलाय ॥
चाहे जो सदा रहन यहाँ ही ॥१२॥

कौन है जिन्दा जग माँही ? किया जिन यश अर्जन भाई ।
उत्तम पथ देवो बतलाई, श्रेष्ठ जन चले मार्ग ग्राही ।।
दोहा :—उत्तर पा सब प्रश्न का, यक्ष प्रसन्न हो जाय ।
अब तुम पानी पीकर दिल में, गहरी तृप्ती लाय ।।
एक फिर दूँगा जिलवाई ।।१३।।

कहो अब किसको जिलपावो, हृदय की बातें दरसावो ।
नकुल को जिन्दा करवावो, नाम सुन कहते क्या चावो ।।
दोहा :—अर्जुन भीम को माँगिये, वहीं सुधारे काम ।
मांग नकुल को क्या पावोगे, सोचो कुछ अंजाम ।।
युधिष्ठिर तब यों दरसाई ।।१४।।

सुनो तुम मेरे दो माई, कुन्ती और माद्री बतलाई ।
कुन्ती का पुत्र मैं जिन्दा ही, माद्री के एक रहा चाई ।।
दोहा :—धर्म भावना बुद्धि बल, यमराजा उस बार ।
देख प्रसन्नता जाहिर की, और चारों भ्रात किये त्यार ।।
सभी जल पी कर गये आई ।।१५।।

धर्म वहाँ मृग होकर आया, विप्र की लकड़ी मिसलाया ।
परीक्षा कर अति हरसाया, सुगुण गा पुनः स्थान धाया ।।
दोहा :—'प्राज्ञ' कृपा 'सोहन मुनि'-दीनी कथा बनाय ।
रहें धर्म पर दृढ़ तम पूरे, डिगे रंच भी नाँय ।।
कथा सुन लेवो अपनाई ।।१६।।

२८ भक्त किसके : लक्ष्मी के या भगवान् के ?

दोहा :—आनन से भगवत भजे, मन में चाहे और ।
छलकर जग को ठग रहा नहि मिले वहाँ ठौर ॥

[तर्ज : यह सुपना सम संसार······]

आशा तज भगवान भजो सब भाई, इच्छा से बिगड़े काम सफल हो नाँही ॥ टेर ॥

अमर भवन में बैठी लक्ष्मी ध्याये, कहाँ विलमाये नाथ अभी नहीं आये ।
इतने में आ गए विष्णु तब दरसाये, क्या सोच रही हो प्रिये मुझे बतलाये ॥
कहाँ उलझ गये लक्ष्मी ने दरसाई ॥ १ ॥

विष्णु कहे मैं भक्त भीड़ के माँही, भूल गया सब तू भी याद नहिं आई ।
भक्त मुझे तज भजे और को नाँही, उनकी भक्ति लख मैं भी गया उलझाई ॥
उन्हें छोड़ आने का मन हो नाँही ॥ २ ॥

भक्तों की प्रशंसा सुन लक्ष्मी मुस्काई, कितने भद्र हैं उलझ गए उन माँही ।
बोली नाथ सब बगुला भक्त जग माँही, आप फंस गये करी परीक्षा नाँही ॥
विष्णु कहे मम भक्त ऐसे हैं नाँही ॥ ३ ॥

मुझे छोड़कर नहीं किसी को चावे, कितना भी कोई उनको आ ललचावे ।
रमा कहे वे मेरे लिए ही ध्यावे, रग-रग में मैं ही रमी परख करवावें ॥
तब तक ही ध्यावे जब तक मैं नहीं आई ॥ ४॥

मेरे भवन कभी नहीं तेरी तरफ लख पावे, सच्चे दिल से अहो निशि मुझको ध्यावे ।
रमा कहे, जो सच्चे भक्त कहलावें, उन्हें आप जा पक्का खूब बनावें ॥
फिर मैं आऊँगी देखूँ सच्ची भक्ताई ॥ ५ ॥

वे किसके भक्त हैं शंका सब मिट जावे, सुनकर विष्णु सब शहर में आवें ।
भगत मंडली देख अति हरसावे, अर्ज करे अब यहीं चौमासा ठावें ॥
हम रम जावेंगे सेवा में चित्त लाई ॥ ६ ॥

विष्णु कहे मम शर्त सुनो रे भाई, जहाँ रहूँगा खाली करूँगा नाँही ।
फिर चार मास पश्चात् देऊँ संभलाई, यह स्थान आपका सीधी बात सुनाई ॥
भगत मंडली चारों ओर है छाई ॥ ७ ॥

दो मास गये पश्चात् रमा मन लाई, कितना है जाकर भक्तों की भक्ताई ।
एक सुन्दर संन्यासिनी का रूप बनाई, जहाँ बैठे विष्णु सीधी वहाँ चल आई ॥
भगत कहे सब एक आवाज लगाई ॥ ८ ॥

अलख भक्त जल लाकर मुझे पिलावे, मधुर वाणी सुन भक्त दौड़कर आवे।
जल से भरकर लोटा गिलास पकड़ावे, रमा कहे नहीं पात्र दूसरा चावे ॥
रत्न कटोरा झोली से निकाला भाई ॥ ९ ॥

पानी पीकर बरतन दिया फिंकाई, देख भक्त यह उनसे यों दरसाई।
इतना कीमती फ़ेंको बात क्या माई, झूठे बरतन को लेते काम हम नाँहीं ॥
यह-देख भक्त के दिल में ऐसी आई ॥१०॥

यह जहाँ रहे वह मालोमाल हो जावे, करी प्रार्थना आप यहीं रुक जावें।
वह बोली जहां पर ढोंगी सन्त रहावे, वहाँ-कैसे रहें हम जरा ध्यान में लावे ॥
भक्त मंडली विष्णु पास चल आई ॥११॥

सत्वर स्थान को खाली आप कर दीजे, कहें आपको अपना पथ झट लीजे।
सन्त कहे कुछ ध्यान शर्त पे दीजे, भक्त कहे गई शर्त, रिक्त झट कीजे।
उठा कमंडल दीना बाहर फिंकाई ॥१२॥

रमा विष्णु को लख करके मुस्काई, बगुला भक्तों की देख लीनी भक्ताई।
विष्णु समझ गये बात सत्य दरसाई, लक्ष्मी हित ही रहे मेरे गुण गाई ॥
ले दंड कमंडल विष्णु गये सिधाई ॥१३॥

दोहा :—लक्ष्मी हृदय में सोचती, प्रभु से श्रद्धा जाय।
अतः सभी के देह में, देऊँ रोग लगाय ॥

शूल रोग हुआ भक्त रहे दुःख पाई, आ रमा पास में दीनी व्यथा सुनाई।
वह बोली दवा तो संत पास सुखदाई, तब ढूंढ संत को गये चरण लिपटाई ॥
कहे भजो भगवान, रमा तज भाई ॥१४॥

शुद्ध भाव से लिया नाम सुखदाई, शूल बिमारी उनकी त्वरित विरलाई।
वापिस आकर देखा रमा है नाँहीं, समझ गये हम शिक्षा लीनी पाई ॥
आशा में हमने दोनों दिये गंमाई ॥१५॥

'प्राज्ञ' प्रसादे 'सोहन मुनि' दरसावे, तृष्णा में उलझ करणी को व्यर्थ गँमावें।
निष्काम भाव से शुद्ध साधना कीजे, हो कर्म निर्जरा जरा ध्यान में लीजे ॥
सदा जपो नवकार चित्त शुद्ध लाई ॥१६॥

२९ | शेख चिल्ली की व्यर्थ आशाएँ

[तर्ज : लावणी]

दोहा :—अहो निश ऊमर जा रही, कीना नहीं विचार ।
आशा पुल को बांधते, जीवन हो गया छार ॥

संसार चक्र में उलझ व्यर्थ दुःख पावे, शेख चिल्ली सम यों ही भाव बनावे ॥टेर॥
एक गाँव का सेठ हिए में धारी, घी से घड़ा भर गया मेरा इस वारी ।
बेचूँ शहर में दाम मिलेगा भारी, ले घट को आया स्टेशन पर उस वारी ॥
डिब्बे में रखकर बैठ रेल में जावे ॥ १ ॥

गर्मी से घी भी पिघल तरल हो जावे, स्टेशन पर उतरी सेठ यों मन में लावे ।
कोई अच्छा कुली मुझे मिल जावे, उसके सिर पर घट को रख ले जावे ॥
इत उत देखते कुली नजर इक आवे ॥ २ ॥

वह था दुखियारा भाग्य बदल जब जावे, करता कोई काम न कौड़ी पावे ।
था घर में अकेला दुःख से समय बितावे, फिर हार थाक कर कुली काम में आवे ॥
वह सोच रहा था मजदूरी मिल जावे ॥ ३ ॥

वह बोला सेठ कुली आपको चावे, सेठ कहे हाँ चलो साथ हो जावे ।
इस घट को लेकर अमुक हाट पहुचावे, क्या लोगे मुख से सही-सही बतलावे ॥
कुली कहे दो रुपये मुझे दिलावे ॥ ४ ॥

श्रम करके घट को सिर ऊपर रख दीना, पथ चलते उस ने यों विचार मन कीना ।
यों दस चक्कर हो जांय बीस कर लूँगा, महीने में रुपये छः सौ मैं पा लूँगा ॥
फिर अजा एक लाऊँगा दूध पीलावे ॥ ५ ॥

फिर बकरे बकरी होंगे उन्हें बेचूँगा, तब तीन सहस से भैंस एक लाऊँगा ।
जब दस हजार होंगे इक भवन बनाऊँ, फिर परण नार मैं सुन्दर बीबी लाऊँ ॥
हो गया पुत्र उसके तब मोद मनावे ॥ ६ ॥

घर-घर में बाँटू लाकर खूब मिठाई, सभी औरतें गावें गीत बधाई ।
फिर उनको दूँगा अच्छी चीजें लाई, वे सभी करेंगी याद मुझे दिन राई ॥
यों विचार में पूर्ण मग्न हो जावे ॥ ७ ॥

एक दिन बच्चे को लेना गोद में चावे, नारी से बोला मुझको लाल दिलावे।
वह बोली नहीं दूँ तभी हाथ बढ़ जावे, शिर झुका कहे मैं लूंगा घट गिर जावे ॥
घट फूट गया घी पानी ज्यूं बह जावे ॥ ८ ॥

तब शेख चिल्ली का ध्यान उधर में जावे, कर पकड़ सेठ कहे दाम मुझे दिलावे।
छह सौ रुपयों का घी मेरा बह जावे, तू दाम दिये बिन नहीं आगे बढ़ पावे ॥
कुली कहे तुम सुनो ध्यान में आवे ॥ ९ ॥

घी गया आपका मेरा घर बह जावे, जर जोरु धरा सब मेरी नष्ट हो जावे।
विस्मित होकर सेठ उसे दरसावे, क्या कहता है तू नहीं समझ में आवे ॥
शेख चिल्ली तब अपनी बात सुनावे ॥१०॥

सुनकर उसकी बात सभी हँस जावे, अब घी के दाम वह कहाँ से लाय चुकावे।
ऐसे संसारी प्राणी जन्म गँमावे, तृष्णा के पुल नित नये-नये बनावे ॥
किन्तु एक दिन सारा यों बह जावे ॥११॥

है तन रूपी घट, आयु रूप घी लाया, संसारी काम में इसको व्यर्थ गमाया।
नहीं धर्म ध्यान में अपना चित्त लगाया, आ गई मृत्यु तब सारा छोड़ सिधाया ॥
कर्मों का कर्जा ले दुर्गति में जावे ॥१२॥

'प्राज्ञ' प्रसादे 'सोहन मुनि' दरसावे, ऐसा शुभ अवसर नहीं हाथ में आवे।
कर सामायिक स्वाध्याय जीवन बन जावे, संसार चक्र का आवागमन मिटावे ॥
फिर मुक्ति नगर का सिद्ध बुद्ध कहलावे ॥१३॥

३० | ईर्ष्या

[तर्ज : खड़ी लावणी]

कर आपस में ईर्ष्या मानव कितना अधम बन जाता है ।
पढ़ा लिखा भी इसके वस हो कैसे शब्द सुनाता है ।। टेर ।।

धनपुर में धनदत्त शाह के सुन्दर नामा नारी थी ।
धन से भरा खजाना जिसका, शान शहर में भारी थी ।।
करता कर से दान अहो निश-दान शालायें जारी थी ।
मिले द्रव्य से लाभ कमाता यही तमन्ना भारी थी ।।
सन्त समागम करना सेठ के दिल में हरदम भाता है ।।पढ़ा०।। १ ।।

कन्या एक सुशीला घर में विवाह योग्य हो गई बाई ।
घर वर योग्य देख परणाऊँ, ऐसे सेठ के दिल आई ।।
कंचन पुर में शाह कंचन का पुत्र हृदय में गया छाई ।
कंचन सेठ से वात करी, तव स्वीकृति उसने फरमाई ।।
विवाह समय आकर के पंडित ऐसी वात सुनाता है ।।पढ़ा०।। २ ।।

अभी आपके शनि दशा है, जाप शनि का करवावे ।
संस्कृत का कोई अच्छा पंडित यहाँ आप को मिल जावे ।।
चंद दिनों के बाद वहाँ पर दो पंडित चल कर आवे ।
गांव बाहर आ धर्मशाल में दोनों ही वहाँ मिल जावे ।।
खबर हुई जब सेठ शीघ्र चल धर्मशाल में आता है ।।पढ़ा०।। ३ ।।

बात हुई विद्वान कहे हम वाराणसी पढ़ आए हैं ।
सब विद्या में पारंगत हैं शास्त्र साथ में लाए हैं ।।
शनि दशा निवारण मंत्र का जाप यहाँ करवावे हैं ।
सवा लक्ष का जाप करो नित सेठ उन्हें दरसावे हैं ।।
एक मास पश्चात् सेठ जब धर्मशाल में आता है ।।पढ़ा०।। ४ ।।

एक पंडित [illegible] नियुक्त [illegible] जाता है ।
दूजा दूसरा भी [illegible] सेठ [illegible] है ।।
पढ़ा-लिखा [illegible] है ।
पढ़-लिखा [illegible] है ।।
[illegible] विद्वान [illegible] है ।।पढ़ा०।। ५ ।।

थोड़ी देर पश्चात् आ गया, दूजा जंगल जाता है।
उससे भी यह बात पूछली, तब वह उन्हें सुनाता है।।
निरा बैल है, पढ़ा लिखा नहीं, यों बकवास मचाता है।
सुनकर उसकी बात सेठ धनदत्त हिए में लाता है।।
भरी हुई है ईर्ष्या कितनी नहीं समझ में आता है।।पढ़ा०।। ६ ।।

इनको शिक्षा दे समझाऊँ ऐसे भाव हृदय आये।
वह भी आ गया सेठ उन्हे लख-दोनों को यों दरसाये।।
अभी यहीं खाना भिजवा दूँ, कहकर झट घर पर आये।
कहे भृत्य से थोड़ा भूसा, घास वहाँ पर ले जाये।।
कहना आपके लिए यह भोजन पीछे शाह जल लाता है।।पढ़ा०।। ७ ।।

भूसा घास लख दोनों पंडित मन में अति विस्मय पावे।
क्या हमको पशु समझे सेठ ने ऐसा भोजन भिजवावे।।
इतने में जल का घट लेकर शाह वहाँ पर आ जाये।
बोला भोजन भेजा आपके उसे आप क्यों नही खाये।।
पंडित बोले सेठ हमें क्या ? पशुवत् समझ खिलाता है।।पढ़ा०।। ८ ।।

कहे सेठ जो खाना आपका वह मैंने भिजवाया है।
गधे बैल के लिए यथारथ यह भोजन मन भाया है।।
अभी आपने अपने मुख से, गधा बैल दरसाया है।
उनका खाना यही समझकर भृत्य साथ भिजवाया है।
घट भर कर के लाया हूं मैं जल भी इतना चाहता है।।पढ़ा०।। ९ ।।

सुनकर दोनों पंडित ऐसे वचन बहुत शरमाये हैं।
ईर्ष्या वश आपस में हमने गधा बैल बतलाये हैं।।
उसके ही फल त्वरित हमारे आज सामने आये हैं।
अत एव सेठ ने घास भेज कर दोनों को समझाये हैं।।
अब हम ईर्ष्या नहीं करेंगे एक-एक मन लाता है।।पढ़ा०।।१०।।

सेठ सामने उन दोनों ने निज गलती स्वीकार करी।
ईर्ष्या वश निन्दा भी कीनी हम दोनों की बुद्धि फिरी।।
अब आगे से ईर्ष्या त्याग कर मारग लेगें शुद्ध सिरी।
कथा श्रवण कर समझो भव्यों ईर्ष्या है दुःख मूल खरी।।
'प्राज्ञ' कृपा 'मुनि सोहन' सबको, वार-वार चेताता है।।पढ़ा०।।११।।

३१ | बुद्धि पर

[तर्ज : द्रोण की]

कैसा भी वलवान सामने होवे-महाराज-समय पर युक्ति उपावे जी ।
लेवे उसको वाँध जीत अपनी कर पावे जी ।। टेर ।।

भीमपुरा में भीमसिंह नरराया-महाराज-प्रजा जन को हितकारी जी ।
न्याय नीति से करे राज, सुख सम्पत्ति सारी जी ।।
उसी गाँव में सेठ हजारी रहता-महाराज-नार सुन्दर घर माँही जी ।
पति आज्ञा में चले दान देवे हरसाई जी ।।
पुण्य योग से गहरी लक्ष्मी पाई-महाराज-किन्तु सन्तान न पावे जी ।।लेवे०।। १ ।।
सेठ सदा ही दान पुण्य भी करता-महाराज-द्वार से खाली न जावे जी ।
रखता पूरा ध्यान सदा घर अतिथि आवे जी ।।
अच्छा सेठ का नाम नगर के माँही-महाराज-राज से आदर पावे जी ।
पुण्य योग से विना वुलाये लक्ष्मी आवे जी ।।
अन्तराय जव टूटी वालक जन्मा-महाराज-सेठ घर आनन्द छावे जी ।।लेवे०।। २ ।।
अच्छे काम में सम्पत्ति खूव लगाई-महाराज-दीन जन दिये जिमाई जी ।
दे वस्त्राभूषण खूव दान में मन हरसाई जी ।।
सेठ भवन लख एक चोर यों सोचे-महाराज-सेठ के गहरी माया जी ।
अतः लूट लूँ सारी माया चिन्तन छाया जी ।।
ऐसे तो नहीं देगा मार ले जाऊँ-महाराज-सोच यों निशि में आवे जी ।।लेवे०।। ३ ।।
अन्दर आकर छिपा देख रहा मौका-महाराज-सेठजी हाट से आवे जी ।
आ गया नजर में चोर सेठ मन में घवरावे जी ।।
सेठानी से कही वात वह सारी-महाराज-अपन कुछ कर नहीं पावे जी ।
यदि हो हल्ला जो करें मार हमको भग जावे जी ।।
अतः बुद्धि से काम करो अब यहाँ पे-महाराज-सेठ स्त्री को दरसावे जी ।।लेवे०।। ४ ।।
मैं तीर्थ यात्रा करने यहाँ से जाऊँ-महाराज-नार यों बात सुनाई जी ।
नहीं वक्त आने का आप सोचो मन माँही जी ।।
सेठ कहे मैं जाऊँगा इस बारी-महाराज-नार कहे मेरी मानो जी ।
जाने नहीं दूँगी आप अभी ज्यादा मन मानो जी ।।
यदि नहीं मानो तो संग मेरो उमंगी-महाराज-आप चाहे जहाँ जावो जी ।।लेवे०।। ५ ।।

ये सारी बातें चोर सुनी मन सोचे-महाराज-ध्यान से देखू सारी जी।
सेठ गये के बाद लेऊँगा माया सारी जी ।।
सेठ कहे यदि यही बात तू चावे-महाराज-लावो रस्सी इस वारी जी।
पकड़ रस्सी का सिरा अलग हुए नर और नारी जी ।।
चोर पकड़ थंभे को छिपा वहीं पर महाराज-थंभे के फेरा खावे जी ।।लेवे०।। ६ ।।
आपाद कण्ठ तस्कर को बाँध लिया है-महाराज-चोर समझे मन माँही जी।
उधेड़ रहे हैं फेरा मुझको बांधे नाँहीं जी ।।
कर अपना सारा काम दम्पत्ती सोचे-महाराज-फिक्र अब कुछ भी नाहीं जी।
आया पहरेदार उसे झट लिया बुलाई जी ।।
पकड़ चोर को शीघ्र राज में लाया-महाराज-भूप से यों दरसावे जी ।।लेवे०।। ७ ।।
कैसा सरगना चोर शंक नहीं लाया-महाराज-निशंक उत्पाद मचावे जी।
अतः आपकी इच्छा हो वह दंड दिलावे जी ।।
पूछे नृप क्या चोरी तुमने कीनी-महाराज-हाल सब वह बतलावे जी।
सुनकर सारी बात भूप मन विस्मय पावे जी ।।
कितनी युक्ति से इसे जेर कर लीना-महाराज-सेठ को भूप बुलावे जी ।।लेवे०।। ८ ।।
खूब करी तरकीब चोर पकड़ाया, महाराज-सेठ तब यों बतलावे जी।
ले अस्त्र शस्त्र यह रात माँहि घर में घुस जावे जी ।।
हल्ला करे तो मार हमें भग जावे-महाराज-नार तब यों दरसाई जी।
ऐसा करो उपाय जिसे लें काम बनाई जी ।।
सुन बात शाह की नृप ने तब दोनों का-महाराज-सभा में मान बढ़ावे जी ।।लेवे०।। ९ ।।
बुला चोर को नरपति यों फरमावें, महाराज-शूलि पर दूँ लटकाई जी।
मेरे राज्य में चोर जार नहीं रहे अन्याई जी ।।
कर जोड़ भूप से तस्कर अरजी करता-महाराज-नहीं चोरी अब करस्यूँ जी।
नियम करूँ ऐसा जीवन में सद्गुण धरस्यूं जी ।।
सुनकर उसके भाव सद्य छुड़वाया-महाराज-भूप के गुण वह गावे जी ।।लेवे०।।१०।।
'प्राज्ञ' प्रसादे 'सोहन मुनी' सुनावे-महाराज-बुद्धि से दुख टल जावे जी।
विकट काम भी जग माँहीं यों सरल हो जावे जी ।।
यह सभी उपज है पूर्व पुण्य की भाई-महाराज-आतमा लेकर आवे जी।
करो यहां पर धर्म साधना आगे पावे जी ।।
तज प्रमाद संवर सामायिक करलो-महाराज-मुक्ति का जो सुख चावे जी ।।लेवे०।।११।।

३२ | तीन खजाना : हुआ गँवाना

[तर्ज : छोटी लावणी]

यह चिन्तामणि सम देह कीमती पाया। पर समझ बिना नर खोकर के पछताया ॥टेर॥

है काकन्दी में सेठ धनावा नामी, धन कंचन से भरपूर नहीं है खामी।
है नारी भद्रा सदा पति अनुगामी पूर्व पुण्य से सब सुख लीने पामी॥
किन्तु पुत्र बिन सब ही शून्य लखाया॥ १ ॥पर०॥

नित ईश भजन में गहरा समय लगावे, और दीन अनाथों की भी सार लिरावे।
सह धर्मी के हित द्रव्य खूब दिलवावे, मिली लक्ष्मी का वह नित लाभ कमावे॥
पुण्य योग एक पुत्र रत्न को पाया॥ २ ॥पर०॥

नाम घमंडीराम दिया हरसाई, पढ़ा लिखाकर दीना योग्य बनाई।
आया हाट पर सीखे काम सदाई, है जवाहरात का काम रत्न परखाई॥
चन्द दिनों में अच्छा ज्ञान वह पाया॥ ३ ॥पर०॥

एक दिवस घमंडी जावे घूमने तांई, चिन्तामणि राह में मिला लिया हरसाई।
सोचे इसको घर में रखना नांही, पिता पास आ मणि को रहा दिखाई॥
देख पिता यों कहे भाग्य से पाया॥ ४ ॥पर०॥

यह चिन्तामणि मन चाही वस्तु बतावे, जो इसको रखे पास सुखी हो जावे।
कँवर कहे बेचूंगा मूल्य फरमावें, सेठ कहे नहीं कोई मूल्य दे पावे॥
जाने की हठ लख पिता उसे समझाया॥ ५ ॥पर०॥

ईमानदार अरु परखवान को देना, सावधान रह रक्षा करो यह कहना।
मानोगे बात तो पावोगे सुख चैना, हुशियारी रखना इसकी कीमत लेना॥
चला वहाँ से सीधा चौक्षे आया॥ ६ ॥पर०॥

जौहरी बजार में कालू जौहरी नामी, कँवर घमंडी गेह हाट की पामी।
मालक पूछे [illegible] कहाँ क्या नामी? आये हो तो कहो बात सुख धामी॥
कँवर कहे मैं रत्न कीमती लाया॥ ७ ॥पर०॥

[illegible] इसकी कीमत क्या मिल जावे, सेठ जौहरी कँवर को यों दरसावे।
यह रत्न चिन्तामणि [illegible], [illegible]॥
[illegible] आया॥ ८ ॥पर०॥

जौहरी पास में बैठ खूब समझावे, किन्तु कँवर के एक बात नहीं भावे।
तब जौहरी उसको अपने साथ ले जावे, अपने ही भवन के कमरे तीन दिखावे ।।
लख रत्न स्वर्ण चाँदी को वह विस्माया ।। ९ ।।पर०।।

कँवर कहे क्या मुझे दिखाने लाये, सेठ कहे यदि सौदा करना चाहे।
पहर-पहर तक जितना आप निकालें, वह सभी आपका वित्त शीघ्र संभाले ।।
सुनकर कँवर का हृदय अति हरसाया ।।१०।।पर०।।

सौदा पक्का कर रत्न सेठ को दीना, फिर सुबह सन्तरी को सब समझा दीना।
घुस गया कँवर रत्नों की परख में भीना, रत्नों से खेलकर समय पूर्ण कर दीना ।।
आ कहे सन्तरी पहर बीत गया भाया ।।११।।पर०।।

कुछ तो लेने दो तब उसको दरसावे, पहर गया है बीत न लेने पावे।
इस स्वर्ण कोष से ले जितना जो चावे, यों चेता संतरी घड़ी पास आ जावे।
दूजे पहर में भूख से वह घबराया ।।१२।।पर०।।

वहाँ पड़ी सुगंधित सुन्दर देख मिठाई, यों कँवर विचारे लेऊँ क्षुधा मिटाई।
भाँग वाँट पी खाऊँ यों मन लाई, खाने को बैठा दीना पहर गमाई ।।
तभी सन्तरी आकर यों दरसाया ।।१३।।पर०।।

गया दूसरा कोष लिया कुछ नांही, यह रजत कोष है ले लो अब मन चाई।
सावधान रह कमी रहेगी नांहीं, मालोमाल होवोगे दिया चेताई ।।
ठंडी हवा लख सो गया पलंग बिछाई ।।१४।।पर०।।

पहर बीतते संतरी आय जगावे, चिन्तामणि दिया खोय कौड़ी नहीं पावे।
देकर धक्का कँवर को बाहर कढ़ावे, रत्न गंवाकर कँवर अति पछतावे ।।
समझो भाव अब ज्ञानी यों फरमाया ।।१५।।पर०।।

इस मानव देह को चिन्तामणि बतलाया, जो कालू सेठ से सौदा करके आया।
यह बाल, जवानी, जरा कोष दरसाया, धर्म साधना रत्न भरो फरमाया ।।
नहीं निकाल सके वह अन्त समय पछताया ।।१६।।पर०।।

'प्राज्ञ' प्रसादे 'सोहन मुनि' दरसावे, तुम कथा श्रवण कर चेतो यदि सुख चावे।
सामायिक स्वाध्याय में चित्त रमावे, जिससे यह अपना नर भव सफल कहावे ।।
सदा जपो नवकार हाथ में आया ।।१७।।पर०।।

३३ | श्री सुलसा सती चरित्र

[तर्ज : द्रोण की]

जो समतारस में सरावोर हो जावे, महाराज वही नर आनन्द पावे जी ।
पाकर आतमा समकित-धन सुख में हो जावे जी ।। टेर ।।

इस भारत भू पर अलकापुरी सी नगरी, महाराज-राजगृहि नाम कहावे जी ।
सुन्दरता लख वार-वार देखन मन चावे जी ।।
मघवा सम जहाँ करे राज श्रेणिक जी, महाराज-प्रजा जन के हितकारी जी ।
न्याय नीति से राज करे सुख में नर नारी जी ।।
अभय कँवर है मंत्री राज में नामी, महाराज-बुद्धि चारों ही पावे जी ।। १ ।।
इसी नगर में नाग गाथा पति रहते, महाराज धनद सम धन का स्वामी जी ।
दास-दासी सब ठाठ नहीं है कुछ भी खामी जी ।।
षट्गुण धारक पालक पतिव्रत नामी, महाराज नाम सुलसा घर नारी जी ।
है नव तत्वों की जाण आण जिनवर की धारी जी ।।
श्रावक व्रत लिये धार पाप से डरती, महाराज जीव रक्षा मन भावे जी ।। २ ।।
चवदह नियम अरु तीन मनोरथ धारे, महाराज जमीकंद दीना त्यागी जी ।
समता रख सामायिक करती धर्मानुरागी जी ।।
चौविहार अरु द्रव्य गिनति के रखे, महाराज जीवन सादा बीतावे जी ।
भौतिक चाहना किंचित भी नहीं मन में लावे जी ।।
षट् पौषध वह प्रति मास में करती, महाराज व्यर्थ नहीं समय गमावे जी ।। ३ ।।
सभी सुख हैं जिनके यहाँ घर मांही, महाराज किन्तु सन्तान न पावे जी ।
अतः सेठ को अहोनिश इसकी चिन्ता थावे जी ।।
गुप्त तरीके भैरूं भवानी पूजे, महाराज मंत्र अरु यंत्र करावे जी ।
पंडा पुजारी नैमित्तिक के चक्र में आवे जी ।।
कई उपाय कर लिए सफल हुआ नाहीं, महाराज बात जाहिर हो जावे जी ।। ४ ।।
सुलसा सती ने बात पति की जानी, महाराज नम्र शब्दों में बोली जी ।
क्यों करते [illegible] दी खोली जी ।।
सुख किसी के पास नहीं है देवें, महाराज कर्म अन्तराय हमारे जी ।
जो [illegible] जी ।।
यदि आपकी मन इच्छा ही होवे, महाराज दूजे सन्तान हो पावे जी ।। ५ ।।

मेरी ओर से आज्ञा आप लिरावें, महाराज शादी दूजी कर लेवें जी।
होगा मन सन्तोष भावना दरसा देवें जी ।।
कहे नागपति ऐसी इच्छा नाहीं, महाराज, पता क्या सुत मिल जावे जी।
जो होगा भावी काम वही आगे में आवे जी ।।
सती कहे तब धर्म साधना करिये महाराज, इसी से आनन्द पावे जी ।। ६ ।।

इक वक्त शचीपति अमर सभा में बोले, महाराज, सती सुलसा सम नाहीं जी।
क्षमा शील सन्तोष दया गुण उनके मांही जी ।।
सुन सभी देव तो बात सत्य ली मानी, महाराज, देव एक मन में लावे जी।
हाड़ माँस की नारी में क्या यह गुण पावे जी ।।
नहीं परीक्षा की तब तक ही अच्छी, महाराज, परीक्षा लूं मन लावे जी ।। ७ ।।

बना साधु का रूप वहाँ पर आवे, महाराज, वंदन कर सति दरसावे जी।
किन चीजों की चाह आपके वह फरमावे जी ।।
कहे संत क्या लक्ष पाक यहाँ पावे, महाराज, तेल की चाह बतावे जी।
दासी को कह तभी तेल शीशा मंगवावे जी ।।
शीशा हाथ में लेते ही गिर जावे, महाराज, दासी दिल में घबरावे जी ।। ८ ।।

वापिस आ दासी अपनी वात सुनाई, महाराज, सती उसको फरमावे जी।
दूजा ले आ सद्य नहीं सति रोष भरावे जी ।।
दैव योग से लावे वही गिर जावे, महाराज, देव ने ज्ञान लगाया जी।
एक रोम में रोष नजर नहीं उनके आया जी ।।
देख व्यवस्था देव हृदय में सोचे, महाराज अमर पति सच दरसावे जी ।। ९ ।।

उस ही क्षण सब शीशे ठीक कर दीने, महाराज, चरण में शीश नमावे जी।
करी प्रशंसा स्वामी ने नहीं मुझ मन भावे जी ।।
जाकर परीक्षा करलूँ यही चित्त आया, महाराज, क्षमा गुण की हो धारी जी।
हुई परीक्षा पास आप ली सिद्धि सारी जी ।।
देव दर्श नहिं कदापि खाली जावे, महाराज, मांगलो जो दिल चावे जी ।।१०।।

सती कहे क्या मांगू धन नहीं चावे, महाराज, कमी नहीं तुमसे छानी जी।
जाणी ज्ञान से वात देव ने त्वरित पिछाणी जी ।।
उस ही क्षण बत्तीस गोलियां दीनी, महाराज उन्हीं से सुत तुम पावे जी।
यह कही देव कर क्षमा याचना सद्य सिधावे जी ।।
सोचा सति ने सबको साथ खा जाऊँ, महाराज पुत्र मन चाया पावे जी ।।११।।

यही सोच कर सारी गोलियां खाई, महाराज, जीव वत्तीस ही आवे जी ।
उदर मांहि एक साथ जीव लख सती घबरावे जी ॥
उस ही क्षण वह देव वहाँ पर आया, महाराज, अमर आकर दरसावे जी ।
एक-एक खानी थी अब नहीं कष्ट उठावे जी ॥
देव योग से पीड़ा शान्त हो जावे, महाराज, देव अब यों दरसावे जी ॥१२॥

जब मृत्यु एक की होगी सब मर जावे, महाराज, कही यों सत्वर जावे जी ।
हुआ समय बत्तीस पुत्र लख आनन्द पावे जी ॥
किया महोत्सव द्रव्य खूब खर्चावे महाराज, याचक मांगे वह पावे जी ।
अभयदान अरु संवर माँही अर्थ लगावे जी ॥
सब पुत्रों की करे पालना अच्छी, महाराज, योग्य जब वे हो जावे जी ॥१३॥

शस्त्र कला अरु शास्त्र कला सिखलाई, महाराज अध्यापक को संभलावे जी ।
सेठ दम्पत्ती लख पुत्रों को द्रव्य दिलावे जी ॥
खूब दिया धन कलाचार्य के ताँई, महाराज, सादर उसको पहुँचावे जी ।
योग्य देख उनको अंगरक्षक भूप बनावे जी ॥
एक वक्त नृप सभा भवन में बैठे, महाराज, चित्र ले एक नर आवे जी ॥१४॥

चित्र देखते सुन्दर चित्र दिखाया, महाराज, देख नृप अति हरसाया जी ।
चित्रकार से पूछा चित्र यह किसका लाया जी ॥
चित्रकार कहे वैशाली नृप कन्या, महाराज, सुजेष्ठा नाम कहावे जी ।
सुनकर के सब बात भूप यों मन में लावे जी ॥
इस कन्या को मैं रणवास में लाऊँ, महाराज, भाव मुख पर आ जावे जी ॥१५॥

अंग चेष्टा देख अभय यों सोचे, महाराज, पिता जी इसको चावे जी ।
मैं करूँ वही उपाय विलम्ब नहीं होने पावे जी ॥
कर अत्तारी रूप वैशाली आये, महाराज, इत्र बढ़िया रख लीना जी ।
बाजार बीच में दुकानदार बन काम यह कीना जी ॥
आवे राज में दासीगण जब लेने, महाराज, इत्र बढ़िया दिखलावे जी ॥१६॥

कम कीमत पर बढ़िया इत्तर पावे, महाराज, भीड़ गहरी लग जावे जी ।
वहाँ पड़ा भूप श्रेणिक का फोटू नजर में आवे जी ॥
ले दासी फोटू महलों में [illegible] आई, महाराज, सुजेष्ठा [illegible] हरसावे जी ।
[illegible] पुरुष नहीं देखा ऐसा यों मन लावे जी ॥
[illegible] फोटू से [illegible] का [illegible] सा, महाराज, [illegible] गाँठ लगावे जी ॥१७॥

बड़े गौर से देख यों मन में धारी, महाराज पति में इन्हें बनाऊँ जी।
नहीं मिले तो क्वाँरी रहकर जीवन बिताऊँ जी ।।
अच्छी तरह से सोच दासी बुलवाई, महाराज, चित्र तू कहाँ से लाई जी ।
जाकर उनकी हाट उन्हें ला यहाँ बुलाई जी ।।
दासी जाकर सारी बात दरसाई, महाराज, अभय आ सब दरसावे जी ।।१८।।

कुँवरी सुजेष्टा अपनी बात सुनाई, महाराज श्रवण कर अभय सुनावे जी ।
त्यागो चिन्ता इच्छा हो सब ही बन जावे जी ।।
पिता पास में आकर सब दरसावे, महाराज त्वरित ही सुरंग बनाई जी ।
जाकर महल में सुरंग को दीनी खुलवाई जी ।।
जब जाने को तैयार हुई सुजेष्टा, महाराज, चेलणा यों दरसावे जी ।।१९।।

चलूँ तुम्हारे साथ मनाई न मेरी, महाराज दोऊ बहनें नृप लारे जी ।
चली सुरंग में तभी सुजेष्टा मन में धारे जी ।।
रत्न जड़ित आभूषण डिब्बा रह गया, महाराज उन्हें मैं लेकर आऊँ जी ।
अभी उठाकर उसको लाऊँ दौड़ी जाऊँ जी ।।
आगे श्रेणिक पीछे चेलणा आवे, महाराज सुरंग बाहर आ जावे जी ।।२०।।

पुनः सुजेष्टा उसी स्थान पर आई, महाराज, वहाँ कोई नहीं पावे जी ।
तभी सुजेष्टा आकर जोर से शोर मचावे जी ।।
पड़ी खबर यह चेटक नृप को सत्वर, महाराज, युद्ध की करी तैयारी जी ।
श्रेणिक नृप ले संग चेलणा बढे अगाड़ी जी ।।
अंग रक्षक बत्तीस वीर हैं पीछे, महाराज, निडर शंका नहीं लावे जी ।।२१।।

हुआ युद्ध चेडा राजा से भारी, महाराज एक के तीर लग जावे जी ।
मरा एक तब सब भाई भी वहीं मर जावे जी ।।
श्रेणिक नृप लख चेलणा रूप को मन में, महाराज अति मोहित हो जावे जी ।
अच्छा स्थान लख स्नेह सूत्र माहीं बंध जावे जी ।।
बड़े ठाट से राजगृह में आये, महाराज महोत्सव खूब मनावे जी ।।२२।।

सुत मरने की बात सती ने पाई, महाराज, शोक विह्वल हो जावे जी ।
फिर समझ जगत का रूप शान्ति वह मन में लावे जी ।।
संसार मुसाफिर खाना आना जाना, महाराज जीव जैसा कर आवे जी ।
उसी तरह से भोगे बात ज्ञानी फरमावे जी ।।
यहाँ आने वाला सदा नहीं रहता है, महाराज, एक दिन यहाँ से जावे जी ।।२३

समझा मन को धर्म ध्यान नित करती, महाराज धर्म में अडिग रहावे जी।
जिनवाणी आगे रख नहीं धोखा खावे जी ।।
इक वक्त वीर जिन चम्पा नगरी बाहर, महाराज, उद्यान में ठहरे आई जी।
विद्युत के सम फैली बात यह चम्पा माँही जी ।।
नगर निवासी प्रभु वन्दन को आये, महाराज, वंदना कर हरसावे जी ।।२४।।

बारह प्रकारे भरी परिषद भारी महाराज वाणी जिनवर फरमावे जी।
कर्म बंध से बचो जीव आगे सुख पावे जी ।।
सुनकर वाणी श्रोता यों मन लावे, महाराज, वीर जिन सच फरमावे जी।
मन इच्छित कर त्याग सभी अपने घर जावे जी ।।
उस ही क्षण अम्बड सन्यासी आया, महाराज, नमन कर अर्ज सुनावे जी ।।२५।।

मैं जाऊँ राजगृह तभी प्रभु फरमावे, महाराज सती सुलसा गुणधारी जी।
दृढ़ धर्मी, प्रियधर्मी क्षमा गुण की भंडारी जी ।।
हाड-हाड में धर्म रंग है छाया, महाराज किरमची उतर न पावे जी।
सुनकर सति की कीर्ति हृदय में आनन्द आवे जी ।।
विधिवत् वंदन करके वहाँ से जावे, महाराज अम्बड के दिल में आवे जी ।।२६।।

राजगृह में बसे अनेक ही श्रावक, महाराज नाम उनका नहीं लीना जी।
कहते ही सती का नाम प्रभु ने फरमा दीना जी ।।
श्रावक बसे तपधारी व्रत के पालक, महाराज बात क्या उनके माँही जी।
इनमें उनमें अन्तर क्या है देखूँ जाई जी ।।
पहले परीक्षा करके बात कहूंगा, महाराज पता मुझको लग जावे जी ।।२७।।

लब्धि योग से ब्रह्मा रूप बनाया, महाराज पूर्व दरवाजे आये जी।
राजगृह में खबर हुई सब दौड़े आये जी ।।
अंधे को सूझता लंगड़े को पाँव कर दीना, महाराज, श्रावक केई वहाँ आये जी।
देख व्यवस्था ब्रह्मा जी को शीश झुकावे जी ।।
अहो ! ऐसे देव तो आज नजर में आये, महाराज सती को जा दरसावे जी ।।२८।।

सती कहे कोई होगा मायाचारी, महाराज, दूसरा दिन जब आया जी।
विष्णु का कर रूप उत्तर दरवाजे छाया जी ।।
मनोकामना पूरण यहाँ हो जावे, महाराज दौड़ कई श्रावक आवे जी।
दु:ख दर्द की बात सुना कहे शरणा चावें जी ।।
मेटो हमारा कष्ट अर्ज सब करते, महाराज, कामना सिद्ध हो जावे जी ।।२९।।

दिवस तीसरे दक्षिण दिशि में आये, महाराज महेश का रूप बनावे जी।
नहीं आवे उसकी मृत्यु समझलो यों दरसावे जी ।।
नगर निवासी सुनकर दौड़े आये, महाराज त्रास से सब कम्पावे जी।
रक्षा करो हे नाथ ! प्राण भिक्षा हम चावें जी ।।
सब आये पर सुलसा सती नहीं आई, महाराज अम्बड़ मन में यों लावे जी ।।३०।।

अब के मैं तीर्थंकर रूप बनाऊँ, महाराज चौबिसवाँ नहीं कहलाऊँ जी।
होय असातना अतः पच्चीसवां मैं बन जाऊँ जी ।।
तीर्थंकर बनकर पश्चिम द्वार पर आये, महाराज निराला रंग जमाया जी।
बचे खुचे श्रावक भी चलकर वहाँ पर आया जी ।।
श्रावक श्राविका सती पास में आये, महाराज, चलो प्रभु दर्शन पावें जी ।।३१।।

सुलसा बोली कौन से हैं तीर्थंकर, महाराज, पचीसवां होवे नाहीं जी।
होगा ढोंगी नहीं चलूंगी बात सुनाई जी ।।
श्रावक श्राविका गये बात यों करते, महाराज प्रभु के पास न जावे जी।
फिर है यह कैसी नार श्राविका नाम धरावे जी ।।
अम्बड़ सोचे दृढ़ धर्मी नहीं आई, महाराज, प्रभु जी सच दरसावे जी ।।३२।।

तीर्थंकर आगे भरी परिषद भारी, महाराज देशना दे हितकारी जी।
सुनकर वाणी सत्य कहे सब ही नर नारी जी ।।
बोले यहाँ पर सुलसा क्यों नहीं आई, महाराज, ज्ञान से जाणूं सारी जी।
वह अपने आप में मस्त हो रही धर्म मंझारी जी ।।
अभी जाय मैं दूं उतार मस्ताई, महाराज, जोश में यों फरमावे जी ।।३३।।

सुनकर बात सब डरे कहो क्या होगा ? महाराज, उन्हें जाकर चेतावे जी।
अब भी करले नमन कष्ट सब ही मिट जावे जी ।।
इधर तजा सिंहासन तीर्थपति ने, महाराज कहे उसके घर जाई जी।
नहीं आने की सजा देय दूँ मजा चखाई जी ।।
लोग दौड़कर सुलसा को चेतावे, महाराज, प्रभु अब यहां पर आवे जी ।।३४।।

जल्दी चलकर करलो नमन प्रभु को, महाराज, किसी की बात न माने जी।
होगा धूर्त कोई आने दो, निर्भय हो जाने जी ।।
इतने में आ गये पचीसवें स्वामी, महाराज, भृकुटी पर सलवट छावे जी।
देख क्रोध की रेल सभी का दिल घबरावे जी ।।
आते ही रोष में सुलसा को ललकारा, महाराज, चित्त कहाँ पर भटकावे जी ।।३५।।

पूर्व पुण्य से धर्म परायण नारी, महाराज मिली उसको मन चाही जी।
धर्म ध्यान कर प्रात: लगे सेवा के माँही जी ।।
वह सास और जेठाणी से यों बोली, महाराज आप तो देखें जावे जी।
काम करूं कहीं गलती हो तो मुझे बतावें जी ।।
विनय सरलता का गुण इनमें भारी, महाराज सभी को यही दरसावे जी ।। ६ ।।धर्म०।।
करो आप तो सेवा संत सती की, महाराज व्याख्यान में ध्यान लगावें जी।
सामायिक स्वाध्याय करी भव सफल बनावें जी ।।
चौथी बहू नहीं काम कभी करने दे, महाराज ईर्षा तीनों के माँही जी।
काम करे चौथी पर तीनों रखे कुटिलाई जी ।।
उसके हर काम में करती नुक्ताचीनी, महाराज अनेक ही दोष बतावें जी ।। ७ ।।धर्म०।।
कहे व्यंग में धणी मिला है कैसा, महाराज कमाना जाने नाहीं जी।
अत: गलती ढ़कने को लग रही काम के माँही जी ।।
ऐसे ताने सुना रही वे नित ही, महाराज सरल चित सुनले सारी जी।
उत्तर एक न देती सब ले गले उतारी जी ।।
एक दिवस तीनों बिन कारण बोली, महाराज काम कुछ भी नहीं आवे जी ।। ८ ।।धर्म०।।
एक बार क्रोध में अंट-संट बक जावे, महाराज तीनों ने मन में धारी जी।
लड़कर निकाले घर से इसको दुख दे भारी जी ।।
करते-करते सहन आखिर घबराई, महाराज अहो निशि है क्या रगड़ा जी।
बिन कारण ही आकर मुझसे करती झगड़ा जी ।।
अति शीतलचन्दन होवे तदपि भाई, महाराज घिसे अग्नि प्रकटावे जी ।। ९ ।।धर्म०।।
एक दिन तीनों आ वह्नि में घी डाले, महाराज बात ऐसी दरसावें जी।
धणी मिला अणकमाऊ घर में बैठा खावे जी ।।
चुभ गये शब्द ये उसके हिरदय माँही, महाराज भोजन उसने नहीं कीना जी।
सारा दिन यों हि करते काम वह बीता दीना जी ।।
हुई रात तब पती भवन में आये, महाराज बात सब ही बतलावे जी ।।१०।।धर्म०।।
जेठाणियें दे ताने हमेशा मुझको, महाराज अलग हो काम चलावें जी।
मजदूरी कर पेट भरें यह सहा न जावे जी ।।
मेरे लिए चाहे कुछ भी मुझे सुनावें, महाराज आपके लिए सुनावें जी।
यह शब्द तीरसम लगे मेरे दिल में चुभ जावे जी ।।
पति ने सुनकर बात शान्त्वना दीनी, महाराज नहीं दिल में घबरावें जी ।।११।।धर्म०।।
जो भावी होगा उसे कोई नहीं जाने, महाराज शान्ति से दिवस वितावें जी।
पति वात सुन नारी दिल में शान्ति पावे जी ।।
सो गई सहज ही नींद उसे आ जावे, महाराज पति को नींद न आई जी।
मेरे कारण घर में यह रही कष्ट उठाई जी ।।
अब यहाँ पर मेरा रहना अच्छा नांही, महाराज निर्णय यह दिल में लावे जी ।।१२।।धर्म०।।

उस ही क्षण दो पत्र लिखे निज कर से, महाराज पिता पत्नी के ताँई जी।
पत्र लिखी कर बन्द रखा है मेज पे लाई जी ॥
लिख दिया आप चिन्ता मत मेरी करना, महाराज नहीं मरने को जाऊँ जी।
भाग्य परीक्षा करूँ भाव ऐसा मैं लाऊँ जी ॥
पत्नी को लिखा माँ पितु की सेवा करना, महाराज चित्त में चिन्ता न लावेजी ॥१३॥धर्म०
हो गया रवाना मध्य रात के माँही, महाराज पास में कुछ नहीं लीना जी।
नवकार मंत्र गिण निशंक हो आगे पग दीना जी ॥
प्रातःकाल जब तीनों सुत वहाँ आये, महाराज पिता को शीश झुकावे जी।
चौथे के सम्मुख नहीं देख यों पिता सुनावे जी ॥
क्यों नहीं आया, इतने में बहू आई, महाराज पत्र कर में पकड़ावे जी ॥१४॥धर्म०
पढकर पत्र को पिता अति दुख पावे, महाराज हृदय में ऐसे लावे जी।
तीनों के दुख से दुखी होय वह यहाँ से जावे जी ॥
है सरल स्वभावी सदाचारी वह पूरा, महाराज भाग्य उसका फल जावे जी।
जहाँ जाएगा वहाँ सफलता निश्चय पावे जी ॥
फिर तीनों सुत को पिता एम दरसावे, महाराज तृष्णा तुम में वढ़ जावे जी ॥१५॥धर्म०
हम चारों कमावें एक कमावे नाँही, महाराज दुख क्यों दिल में लाये जी।
रखते कुछ सन्तोष नहीं वह यहाँ से जावे जी ॥
सुनकर बोले लाड प्यार में उसको, महाराज आपने दिया बिगारी जी।
अब चला गया तो कहें आप क्या गलती हमारी जी ॥
उधर सास बहुओं से यों दरसावे, महाराज देवर क्यों यहाँ से जावे जी ॥१६॥धर्म०
घर आता तब रगड़ा झगड़ा सुनता, महाराज अहो निशि करो लड़ाई जी।
इसीलिए वह तंग हो गया, गया सिधाई जी ॥
पतिबल से वे तीनों सास से कहती, महाराज छोड़ दो या पंचाई जी।
यदि नहीं रहना है घर में तो लो अलग बसाई जी ॥
यह बात फैलते सेठ कान में पहुँची, महाराज सेठ पत्नी को सुनावे जी ॥१७॥धर्म०
जितने भूषण तन पर सबको खोलो, महाराज सादे कपड़े लो धारी जी।
सारी सम्पत्ति दे पुत्रों को चलो इस वारी जी ॥
पीछे-पीछे छोटी वहु भी आवे, महाराज जहाँ पर आप सिधावे जी।
पति आज्ञा अनुसार सदा ही सेव बजावे जी ॥
तीनों पुत्र अरु वहुएँ जाते देखे, महाराज नहीं कुछ भी दरसावे जी ॥१८॥धर्म०।
रुकने की कहना दूर, हिए में राजी, महाराज सदा का दुख मिट जावे जी।
जहाँ जाना चाहो जायें हम क्यों संकट पावे जी ॥
सेठ सेठाणी बहू वहाँ से चलकर, महाराज अच्छे मोहल्ले में आये जी।
मकान देखकर मालिक से ले लिया किराये जी ॥
यह बात गाँव में विद्युत के सम फैली, महाराज पंच जन वहीं पर आवे जी ॥१९॥धर्म०।

कहे सेठ से बिना लिए ही हिस्सा, महाराज करें हम अब पंचाई जी।
पुत्रों से आपका हक देंगे हम सही दिलाई जी ।।
सेठ कहे धन नाहीं मुझको चाहे, महाराज व्यर्थ क्यों चलकर आये जी।
राजी खुशी हम त्याग द्रव्य उनको संभलाये जी ।।
निठल्ले पंच क्यों करें व्यर्थ पंचाई, महाराज बात सुन सभी सिधावे जी ।।२०।।धर्म०।।
एकान्त स्थान में वे तीनों ही बैठे, महाराज सामायिक की सुध भावे जी।
नहीं रहा जंजाल ध्यान एकाग्र ध्यावे जी ।।
नहीं आज सम हम धर्म साधना कीनी, महाराज शांति चित माँही आवे जी।
तभी बहू आ सास ससुर को यों दरसावे जी ।।
किसी तरह की चिन्ता चित्त नहीं लावें, महाराज कई हूनर मुझे आवे जी ।।२१।।धर्म०।।
मैं करके कमाई देऊँ सबको जिमाई, महाराज सेठ जी यों फरमावे जी।
क्या मेरी शान गमा करके तू द्रव्य कमावे जी ।।
बहू कहे रहे इज्जत आपकी भारी, महाराज काम वह कर दिखलाऊँ जी।
दिन-दिन जग में नाम होय, वह शान बढ़ाऊँ जी ।।
रात माँहि एक वस्तु त्यार कर लीनी, महाराज सेठ को ला दिखलावे जी ।।२२।।धर्म०।।
सेठ देखकर चकित हो गया भारी, महाराज बजार में उसको लावे जी।
देख उसे सब जन खरीदकर लेना चावे जी ।।
अच्छी कीमत मिली सेठ हरसाया, महाराज नगद से साधन लाया जी।
उसी समय बहू ने भी सब सामान बनाया जी ।।
करा पारणा स्वयं जीमने बैठी, महाराज भोजन वहाँ सुख से खावे जी ।।२३।।धर्म०।।
दिन में सेवा रात में हूनर करती, महाराज वस्तु नित नई बनावे जी।
इसका लखकर काम सेठ दम्पत्ति सुख पावे जी ।।
उच्च घराने की है विदुषी कन्या, महाराज गृह लक्ष्मी घर आई जी।
अपने घर की शान अहो निशि रही बढ़ाई जी ।।
करके परिश्रम कैसीं चीजें बनावें, महाराज कमाकर हमें खिलावे जी ।।२४।।धर्म०।।
ऐसे करते छह महीने बितावे, महाराज एक दिन बहु दरसावे जी।
आज्ञा हो तो पीहर जाय वापिस आ जावे जी ।।
सास कहे हे बेटी जो तुम इच्छा, महाराज करो वो ही सुख चावे जी।
आज्ञा पाकर बहु खुशी हो पीहर जावे जी ।।
घर से निकली गली के नुक्कड़ आई, महाराज धूल का ढेर दिखावे जी ।।२५।।धर्म०।।
देख उसे वह सारी बात को समझी, महाराज लौट वापस घर आई जी।
कहे पिता जी काम करें एक अर्ज सुनाई जी ।।
गली नुक्कड़ पर पड़ी रेत की ढेरी, महाराज उसे क्रय करके लावें जी।
सुनकर सेठ आश्चर्य चकित हो, यों फरमावे जी ।।
धूल ढेर को लेकर क्या लेवोगी, महाराज व्यर्थ ही दाम लगावे जी ।।२६।।धर्म०।।

बहु कहे नहीं दाम व्यर्थ में जावे, महाराज बहु का आग्रह भारी जी।
सेठ गया उस हाट बात कही अपनी सारी जी ।।
बोला सेठ वह आज निकाली यहाँ से, महाराज माल सारा बिक जावे जी।
यह पड़ी यहाँ पर धूल गाँव बाहर फिकवावे जी ।।
चाहो आप तो इसे यों ही ले जावे, महाराज सेठ कीमत दे लावे जी ।।२७।।धर्म०।
बहू ने उसको, तहखाने में रखली, महाराज सेठ दिल माँही लावे जी।
इस मिट्टी को यहाँ भरवा कर यह क्या पावे जी ।।
उस वक्त बहू ने भट्टी वहाँ बनवाई, महाराज चढ़ावे तेल कढ़ाई जी।
फिर छान धूल को डाल दीवी कढ़ाही मांही जी ।।
तेल उबलता जाय ले खुरपा बैठी, महाराज उसे वह खूब हिलावे जी ।।२८।।धर्म०।
कठोर हुआ तब दिया संचो में डाली, महाराज स्वर्ण ईंटें बन जावे जी।
पाँच ईंट रख सेठ सामने वह दिखलावे जी ।।
घाण दूसरा चढा रसायन डाली, महाराज स्वर्ण ईंटें हो जावे जी।
इस तरह बनाते बहू ढेर ईंटों का लगावे जी ।।
सेठ देखकर कहे बेटी तू ऐसी, महाराज कहाँ तू शिक्षा पाई जी ।।२९।।धर्म०।
बहू कहे सब आप कृपा का फल है, महाराज सेठ इक ईंट ले जावे जी।
बेच बाजार में हाट मोल ले, व्यापार चलावे जी ।।
चले खूब व्यापार कमाई गहरी, महाराज दान दे हाथ से भारी जी।
चंचल लक्ष्मी समझ करे खुलकर दातारी जी ।।
ज्यों-ज्यों देवें त्यों-त्यों बढ़ती जावे, महाराज नाम जग में हो जावे जी ।।३०।।धर्म०।
पूर्व पुण्य से सेठ हाट पर अच्छा, महाराज वढ़े रुजगार हमेशा जी।
दिन दूणा अरु रात चौगुणा आ रहा पैसा जी ।।
न्याय नीति से करे काम वह सारा, महाराज नाम भी जग में छाया जी।
अन्याय अनीति नहीं करे वहां बढ़ रही माया जी ।।
उधर पुत्र तीनों की हालत बिगड़ी महाराज पास में कौडी न पावे जी ।।३१।।धर्म०।
पिता छोड़ गये द्रव्य सभी दिया खोई, महाराज चित्त में चिन्ता छाई जी।
खाने को नहीं अन्न कहां से रक्खें लाई जी ।।
पिता काम को वढ़ता लखकर सोचे, महाराज गुप्त धन वे ले जावे जी।
इसीलिए व्यापार वढ़ा सन्मुख दिखलावे जी ।।
अत: वहां जा पाँती अपनी लावे, महाराज, तीन ही चलकर आवे जी ।।३२।।धर्म०।
कहे पिता से धन हमको सब दे दो महाराज नहीं तो शान विगाड़े जी।
कहते हैं हम साफ जरा[1] में धूल ही डारे जी ।।
पिता कहे मैं वहां से क्या ले आया, महाराज सोचकर वोलो वाणी जी।
भरे जोश में पुत्र कहे हम लिए पहचानी जी ।।
दुनियाँ को दिखाने करो धर्म की करणी, महाराज गुप्त धन साथ में लावे जी ।।३३।।धर्म०।

१- बुढ़ापा

असली माल तो धोखा से ले आये, महाराज दीवाला वहां रख आये जी।
बिन पैसे कहो कैसे कमाकर अब हम खायें जी ॥
कोलाहल सुन लोग वहां पर आये, महाराज उन्हें लख ऐसे बोले जी।
क्यों लड़ते हो आकर यहां कुछ हिय में तोलें जी ॥
लोग कहें क्या लेकर वहां से आये, महाराज, इन्हें आ व्यर्थ सतावें जी ॥३४॥धर्म०॥
अच्छा चल रहा काम सेठ श्रम करता महाराज व्यर्थ आ करो लड़ाई जी।
खावो कमाकर, यहां लड़ने में शर्म न आई जी ॥
सुनते ही जोश में तीनों भाई बोले, महाराज, यहां किसने बुलवाया जी।
हम पिता पुत्र समझेंगे आप क्यों आड़ा आया जी ॥
झगड़ा देखकर चौथी बहू वहां आई, महाराज जेठों को यों दरसावे जी ॥३५॥धर्म०॥
क्यों लड़ो आय यहां यदि द्रव्य ही चाहे, महाराज चलो सब घर के माँही जी।
सुवर्ण ईंटें पड़ी इन्हें ले लो दरसाई जी ॥
चार लाइन है तीन आप ले जावे, महाराज श्रवण करके हरसावे जी।
तीनों भाई तीन लाईनें ले घर जावे जी ॥
जाते वक्त बहू कहे और भी चावे, महाराज आप आकर ले जावें जी ॥३६॥धर्म०॥
वापिस आकर चौथी लाईन ले जावे, महाराज बहूचिन्ता नहीं आने जी।
श्रम करके मैं और बनालूं दुख नहीं मानें जी ॥
जो जाने कमाना वह नहीं मन में लावे, महाराज करी श्रम और कमाऊँ जी।
फिर करूँ दान हाथों से दिल में नहीं घबराऊँ जी ॥
जो श्रम से घबरा, नहीं कमाना जाने, महाराज दान से वह घबरावे जी ॥३७॥धर्म०॥
कर मेहनत बहू ने काम शुरू कर दीना, महाराज फेर ईंटें बनवाई जी।
लगा दिया वहां ढेर, स्वर्ण की कमी न काई जी ॥
श्रम करने से ही काम सिद्ध होता है, महाराज कायर श्रम से घबरावे जी।
क्यों करें परिश्रम मिले भाग्य से तब ही खावें जी ॥
सुनो हेतु एक सिंह भूखा बैठा था, महाराज कहीं सीधा आ जावे जी ॥३८॥धर्म०॥
उस समय वहां एक बिल्ली चलकर आई, महाराज, सिंह से यों दरसावे जी।
मामा कहो क्या हाल सुस्त कैसे बतलावे जी ॥
वह बोला अभी ना खुराक मुंह में आई महाराज तीन दिन हो गये यों ही जी।
सुनकर सिंह की बात जरा बिल्ली मुस्काई जी ॥
बोली मामा तुम, बिन उद्यम मर जावो, महाराज मुंह में कोई न आवे जी ॥३९॥धर्म०॥

दोहा :—जरा गौर से देखिये, मामा तेरी ओर।
काम बनाऊँ सब ही, आलस तन से छोर ॥ १ ॥
आरंभ कर उद्यम कर, नाहर को कहे मिनकी।
म्हारे कांई भैंस मिले, तोई दूध पीऊं नितकी ॥ २ ॥

बात सही है श्रम से भाग्य फलता है, महाराज कदाचित् नहीं मिल पावे जी।
तो समझो श्रम में कहीं कमी है यों दिखलावे जी ।।
अब सुनो जिकर तुम उस चौथे लड़के का, महाराज निशा में घर तज जावे जी।
फिरे अरण्य में फल खावे और काम चलावे जी ।।
चलते-चलते बहुत दूर आ जावे, महाराज एक दिन राह में आवे जी ।।४०।।धर्म०।
एक पारधी हंस पकड़ ले आया, महाराज देखकर कंवर सुनावे जी।
कहो आप इसको अब कहां पर ले कर जावे जी ।।
कहे शिकारी ले जा शहर में बेचूँ, महाराज, दाम मुझको मिल जावे जी।
अनुकम्पा ला कँवर कहे मुझको दिलवावे जी ।।
क्या कीमत लोगे जो भी देना चावें, महाराज दाम नहीं एक भी पावे जी ।।४१।।धर्म०।
क्या देऊँ इसको कँवर चित्त में सोचे, महाराज अंगूठी अंगुली माँही जी।
देकर उसको लिया हंस निज गोदी माँही जी ।।
मैं स्वयं और हंसा भी भूखा है सो महाराज चलकर गाँव में आया जी।
सोचे शान्ति मिले हंसा की भूख मिटाया जी ।।
हंसा के दूध वा मोती कहीं मिल जावे, महाराज सेठ के द्वार पे आवे जी ।।४२।।धर्म०।
देख सेठ ने स्वागत इनका कीना, महाराज भोजन की अर्जी कीनी जी।
प्रथम पिलावे दूध हंस को यों कह दीनी जी ।।
लगा पिलाने दूध कंकाली आई, महाराज, कड़ककर य़ों दरसावे जी।
पड़ो कूप में सारे ही क्यों दूध पिलावे जी ।।
क्या दूध यहां पर इसे पिलाने लाये महाराज सेठ तब यों फरमावे जी ।।४३।।धर्म०।
क्यों तू अकड़ कर ऐसी बात सुनावे, महाराज कमाकर मैं ही लाऊँ जी।
सेठाणी कहे घर का काम तो मैं ही चलाऊं जी ।।
आपस में लख विवाद सेठ दिल में सोचे, महाराज सद्य उठ करके जावेजी।
हलवाई की दुकान आकर दूध पिलावे जी ।।
दोनों ही बैठकर वहीं पर भोजन कीना, महाराज जीम आगे बढ़ जावे जी ।।४४।।धर्म०।
कँवर हंस को लेकर आगे जावे, महाराज जंगल माँही आ जावेजी।
देख हंस परिवार हर्ष का पार न पावे जी ।।
देकर के आवाज पास बुलवाये, महाराज बिछुडे हम पुनः मिल जाये जी।
आपस में मिल सभी प्रेम से खुशी मनाये जी ।।
कहे कँवर से हंसा निज भाषा में, महाराज अभय दाता मन भावे जी ।।४५।।धर्म०।
भूलूँ नहीं उपकार कभी जीवन में, महाराज मृत्यु से दिया बचाई जी।
आप समा दातार और जग में है नाँही जी ।।
अब पूर्ण दया कर मुझे मुक्त कर देवें महाराज रहूँ परिवार के माँही जी।
मम इच्छा है यही आपको दीनी सुनाई जी ।।
सुनी कँवर ने उसको मुक्त कर दीना, महाराज पुनः परिवार में आवे जी ।।४६।।धर्म०।

परिवार सामने बीतक हंस सुनाई, महाराज मृत्यु से मुझे बचाया जी।
अनुकम्पा नहीं करते तो यमलोक सिधाया जी ॥
सुनकर सारी बात सभी यों बोले महाराज हमें भी सेवा करनी जी।
जितनी भी बन सके तो उतनी करके भरनी जी ॥
वापिस आकर हंस उन्हें ठहरावे, महाराज दिवस दो चार रुकवावे जी ॥४७॥धर्म०॥
बात मानकर कंवर वहीं रुक जावे, महाराज हंस उड़ दधि तट आवे जी।
भरे चोंच में मोती रतन ला ढ़ेर लगावे जी ॥
देख ढ़ेर को कंवर हृदय में सोचे, महाराज कहाँ रक्खू ले जाई जी।
उसी समय एक युक्ति उसके ध्यान में आई जी ॥
गोबर की थापड़ी माँही इनको भरलूँ महाराज वहीं वह काम करावे जी ॥४८॥धर्म०॥
आधी थापड़ियाँ कोरी भी रख लीनी, महाराज उन्हें वह अलग रखावे जी।
ऐसे समय एक जहाज वहाँ आकर रुक जावे जी ॥
जा कँवर वहाँ कप्तान से बातें करता महाराज पूछे यह कहाँ पर जावे जी।
कोशम्बी जायेंगे पोत ये सच दरसावे जी ॥
कंवर कहे मुझको भी वहीं पर चलना, महाराज चलो ऐसें फरमावे जी ॥४९॥धर्म०॥
कँवर कहे यह थापड़ियाँ भी रखनी, महाराज इन्हें क्यों लेकर जावे जी।
यही कमाई और साथ में क्या ले जावे जी ॥
रखकर उनको किया किराया निश्चय, महाराज पोत आगे बढ़ जावे जी।
चलते-चलते मार्ग माँहि इन्धन खूट जावे जी ॥
कहे मालिक हमको इन्धन आप दिलावे, महाराज कँवर ऐसे दरसावे जी ॥५०॥धर्म०॥
मेरें जैसा इन्धन मुझ को देना, महाराज सभी बातें स्वीकारी जी।
कोरी थापड़िये गिणकर उनको दे दी सारी जी ॥
जब जहाज कोशम्बी नगरी तट पर आये, महाराज कँवर कहे इन्धन लावे जी।
उस ही क्षण वहाँ मँगा थापड़ियाँ कहे गिणावे जी ॥
कँवर कहे मुझ जैसी ही दिलवावे, महाराज तोड़कर एक दिखावे जी ॥५१॥धर्म०॥
कहे मालिक ऐसा इन्धन कहां से लायें, महाराज कँवर उनको दरसावे जी।
नहीं चाहिए मुझे आप चिन्ता नहीं लावें जी ॥
देकर किराया ले थापड़िये आया, महाराज नगर वाहर डलवावे जी।
आने का संदेश पिता के पास भिजावे जी ॥
मिलते ही सूचना पिता गाड़ी ले आया, महाराज पिता को शीश झुकावे जी ॥५२॥धर्म०॥
कुशल क्षेम की वात करो हो हर्षित महाराज खुशी का पार न पावे जी।
पिता कहे अब चलो देर नहीं होने पावे जी ॥
बैठ गाड़ी में की चलने की त्यारी, महाराज पुत्र ऐसे दरसावे जी।
थापड़ियाँ रक्खो सब अन्दर छोड़ न जावें जी ॥
पिता कहे यह अपशकुनी है भाई, महाराज इन्हें घर क्यों ले जावे जी ॥५३॥धर्म०॥

पुत्र कहे यह मेरी कमाई सारी, महाराज श्रवण कर झट रखवावे जी ।
सहर्ष हांक गाड़ी को अपनें घर पर लावे जी ।।
मात चरण में आकर शीश नमावे, महाराज मात आशीष सुनावे जी ।
पत्नि भी आ पति चरण में शीश झुकावे जी ।।
घर में खुशी का आज पार नहीं पावे, महाराज प्रेम से लक्ष्मी आवे जी ।।५४।।धर्म०।।
पिता एक दिन सुत को यों दरसावे, महाराज बहू घर लच्छी आवे जी ।
तेरे जाने के बाद सभी को कमा खिलावे जी ।।
भाग्य शालिनी स्वर्ण ईंटें बनवाई, महाराज, कंचन से घर भर दीना जी ।
घर की बढ़ाई शान काम यह उत्तम कीना जी ।।
तभी पुत्र कहे उससे मैं क्या कम हूँ, महाराज आप अब देख लिरावे जी ।।५५।।धर्म०।।
उसी समय थापड़िये लाकर रखी, महाराज पाणी से पात्र भरावे जी ।
थापड़ियों के ऊपर से सब मैल हटावे जी ।।
अन्दर देखे रत्न चमक दिखलावे, महाराज सेठ लखकर हरसावे जी ।
पिता कहे हे पुत्र रत्न यह कैसे पावे जी ।।
पुत्र हंस का सारा हाल सुनावे, महाराज श्रवण करके फरमावे जी ।।५६।।धर्म०।।
तू निश्चय बहू से निकल गया है आगे, महाराज रत्न का ढ़ेर लगाया जी ।
पुण्य शाली है पुत्र तेरी ही घर में माया जी ।।
तीनों पुत्र जब सुवर्ण ईंटें घर लाये, महाराज चोरों ने बात यह जाणी जी ।
हाथ साफ कर लेवें धन पर यों मन आणी जी ।।
गये रात में सेंध लगा कर धन को, महाराज चुरा करके ले जावे जी ।।५७।।धर्म०।।
प्रातः उठकर घर के अन्दर देखे, महाराज सुवर्ण ईंटें गई सारी जी ।
छाती मस्तक पीट रहे दुःख हो रहा भारी जी ।।
लड़कर पिता से धन लेकर के आये, महाराज व्यर्थ ही क्लेश वढ़ाया जी ।
नहीं भाग्य में कौड़ी मिथ्या दुख हम पाया जी ।।
अन्याय करी धन पाकर हर्षित होता, महाराज अनर्थ का धन न रहावे जी ।।५८।।धर्म०।।
यह खबर पिता के पास किसी से आई, महाराज बहू सुनकर दरसावे जी ।
नाथ आप जाकर भायों की खबर लिरावें जी ।।
लघु भाई तव गया ज्येष्ठ भ्राता के, महाराज हालत विगड़ी दिखलावे जी ।
चरण नमी कहे आप यहां क्यों कष्ट उठावे जी ।।
वड़े भ्रात कहे जव से तू तज जावे, महाराज तभी से दुख हम पावे जी ।।५९।।धर्म०।।
चोर चुराकर से गये पूंजी सारी, महाराज खाने को अन्न नहीं पावे जी ।
अनुज कहे सव सुधरे, नीयत शुध हो जावेजी ।।
अन्याय अनीति करने वाला कोई, महाराज कभी नहीं सुख वह पावे जी ।
मन मीठा कर चन्द समय में दुखी हो जावे जी ।।
यदि अब भी अपनी नियत को वदलावें, महाराज पुनः वही सुख आ जावे जी।।६०।।धर्म०।।

ठीक रहो तो सेवा में हाजिर हूँ, महाराज सभी ने प्रण यों कीना जी ।
न्याय नीति में चले धर्म का शरणा लीना जी ।।
उस ही क्षण लघु भाई निज घर आकर, महाराज रत्नों का डिब्बा लावे जी ।
भ्राताओं को देकर सारा दुःख मिटावे जी ।।
अब न्याय नीति से काम करे त्रय भाई, महाराज काम सुलटा हो जावे जी ।।६१।।धर्म०।।
अब तो घर में संवर सामायिक होती, महाराज भावना ठीक बनाई जी ।
इक धर्मी ने दीना सब सुखी बनाई जी ।।
धर्म शरण में जो भी नर आ जावे महाराज वही सुख में हो जावे जी ।
भाग्यशाली हो उसी व्यक्ति के मन में भावे जी ।।
अतः श्रवण कर जीवन माँहि उतारो, महाराज धर्म से अमर हो जावे जी ।।६२।।धर्म०।।
एक वक्त विचरते धर्म घोष मुनि आये, महाराज भवि दिल हर्ष अपारी जी ।
वंदन करने भाव युक्त आये नर नारी जी ।।
भरी परिषद मुनि उपदेश सुनावे, महाराज मानव भव दुर्लभ पावे जी ।
लेलो इससे लाभ धर्म कर जो सुख चावे जी ।।
करी श्रवण इच्छानुसार प्रण कीना, महाराज कोई ना खाली रहावे जी ।।६३।।धर्म०।।
चार पुत्रों अरु सेठ सभी की नार्यां, महाराज श्रावक व्रत धारण कीना जी ।
रात्रि भोजन जमीकंद सब ही तज दीना जी ।।
षट् पौषध माह में करे सभी हर्षित हो, महाराज धर्म का पालन करते जी ।
अब शुद्ध आय से जीवन सारे यापन करते जी ।।
जैसी साधना करी वैसी गति पाया, महाराज धर्म से सद्गति पावे जी ।।६४।।धर्म०।।
प्राज्ञ प्रसादे सोहन मुनि सुनावे, महाराज मुश्किल से नर तन पाया जी ।
क्या विश्वास श्वांस का ज्ञानी सच फरमाया जी ।।
करलो तजी प्रमाद साधना भाई, महाराज ऐसा अवसर नहीं आवे जी ।
समझ गये वे ही नर जग से झट तिर जावें जी ।।
दो हजार छैयाली, छोटी पादू, महाराज अक्षय तिथि पर्व मनावे जी ।।६५।।धर्म०।।

३५ | भाग्य की लीला

(तर्ज :-नेम जी की जान बनी भारी)

साथ में सुकृत ले आया, वही नर सुख सम्पति पाया ।। टेर ।।

शहर एक संभव सुखकारी, शंभूसिंह भूपति गुण धारी ।
प्रजा का पूरा हितकारी, दीन जन पावे आ द्वारी ।।
दोहा :—उसी नगर माँही रहे, लक्कड़हारा एक ।
पत्नी अरु बच्चा है जिसके चाल-चलन में नेक ।।
मिले अन्न दारु[1] भार लाया ।। १ ।।

प्रति दिन अच्छा काम करता, मौज और मस्ती माँहि रहता ।
फिकर नही किंचिद् भी रखता, लिखा है भाग्य वही मिलता ।।
दोहा :—एक दिन जंगल में गया, लकड़ी काटण ताँय ।
बिल से सर्प निकल कर उसको, काट त्वरित भग जाय ।।
वहीं वह परभव को पाया ।। २ ।।

नार ने संस्कार कीना, भाग्य मुझ उलटा लख लीना ।
भारी ला बेचूं भाव कीना, गई वह लकड़ काट लीना ।।
दोहा :—तीन वर्ष का वाल वहाँ, नदी किनारे आय ।
पांव फिसल गिर गया नदी में, जल में वहता जाय ।।
भविष्य नहीं जाने कोई भाया ।। ३ ।।

नदी पर पन्ना पुर नामी, रहे वहाँ मंत्री हितकामी ।
नदी तट आवे स्नान ताँई, स्तुति पद बैठ गावे वहाँ ही ।।
दोहा :—वालक वहता आ रहा, पानी धार के माँय ।
हिम्मत करके निकाल लाया, देख उसे हरसाय ।।
उठा कर घर पर ले आया ।। ४ ।।

सन्तति इनको थी नाहीं, नार लख आनन्द अति पाई ।
सहज ही आया घर माँही, भेज दिया प्रभु ने हम ताँहीं ।।
दोहा :—अपना पुत्र ही मान कर, सेवा माँही दास ।
देख रेख पूरी करता है, हरदम रहता पास ।।
भोजन दे वने पुष्ट काया ।। ५ ।।

१- लकड़ी की भारी

धर्म से गृहिणी रखती प्यार, करे सामायिक नित शुध धार।
सच्चित का त्याग रखे हर बार, विवेक से पाले गृहस्थाचार ।।
दोहा :—रात्रि भोजन कंद सब, कर दीना है त्याग।
चवदा नियम तीन मनोरथ-अच्छी जिसके लाग ।।
एक दिन भाव यह मन आया ।। ६ ।।
पति को देऊं समझाई, मानव भव आया हाथ माँही।
वापिस यह कभी मिले नाँही, करो जिन धर्म यों दरसाई ।।
दोहा :—बात हृदय में जम गई, नारी की उस बार।
धर्म ध्यान में लग गया मंत्री, लीनी प्रतिज्ञा धार ।।
धर्म है जीवन सुख दाया ।। ७ ।।
पुत्र का नाम कीर्ति प्यारा, मायत ने मन में यों धारा।
पढ़ाने भेजे गुरु द्वारा, सीख ले वहां ज्ञान सारा ।।
दोहा :—योग्य अध्यापक को बुला, सोंप दिया उस बार।
शस्त्र-शास्त्र का ज्ञान सिखाकर, किया उसे हुशियार ।।
अध्यापक कीर्ति को लाया ।। ८ ।।
कला जब उसने दिखलाई, दूर एक बिन्दु बनवाई।
बींध दो इसको दरसाई, तीर से बींधा क्षण माँही ।।
दोहा :—लख करके उस कार्य को, विस्मय मन में लाय।
मात-पिता अरु नगर निवासी, वाह-वाह शब्द सुनाय ।।
गुरु को धन अति दिलवाया ।। ९ ।।
नगर में बसन्तोत्सव आया, बाग में महोत्सव मंडवाया।
भूप अरु पुत्री देखण आया, कई वहां कारज रखवाया ।।
दोहा :—प्रतियोगिता में प्रथम, कीर्ति रहा है आय।
सभी कार्य में जय-जय हो रही, देख लोग गुण गाय ।।
कँवरी के चित्त आनन्द छाया ।।१०।।
वनाऊँ इनको जीवन संगी, इन्हीं से आतम गई रंगी।
कलायें इनकी पूर्ण चंगी, काम यह करे दासी गंगी ।।
दोहा :—बीस वरस का तरुण यह, रूप लावण्य भंडार।
हृष्ट पुष्ट है तन से अच्छा, इसमें क्या है विचार ।।
बुला दासी को दरसाया ।।११।।
कीर्ति संग व्याह मेरा करवाय, नहीं तो मरूँ कटारी खाय।
रुदन कर पड़ी भूमि पर जाय, दासी दे आश्वासन समझाय ।।
दोहा :—इच्छा मुआफिक काम सब, कर दूं शान्त हो जाय।
शान्ता का मन शान्त हो गया, दासी कीर्ति घर जाय ।।
भाव सब उस को बतलाया ।।१२।।

कुमारी शान्ता यह चावे, रात में महल नीचे आवे।
अश्व दो साथ माँही लावे, यहां से दूर देश जावे ।।
दोहा :—सुनकर सारी बात को, मंजूरी दिलवाय।
कीर्ति भी मोहित था उस पर, मन इच्छा फल जाय ।।
रात में घोड़ा ले आया ।।१३।।
दोनों ही द्रव्य साथ लावे, अश्व चढ़ पार हो जावे।
पीछे मुड़ नहीं देख पावे, आगे वे बढ़ते ही जावे ।।
दोहा :—एक हफ्ते में आ गये, कांगरु नगरी माँय।
अच्छी जगह पर धर्मशाल में आकर के ठहराय ।।
भावना फली हर्ष छाया ।।१४।।
बनावे भोजन कुमारी, सामग्री लावे वहां सारी।
अश्व को दिया घास डारी-कीर्ति दिया काम निपटारी ।।
दोहा :—चीजें केई खरीदने, जाय रहा बाजार।
उमंग गहरी धर कर मन में, चल रहा हर्ष अपार ।।
साँकड़ी गली माँही आया ।।१५।।
गली में राज-वैद्य पुत्री देख कर कीर्ति को उतरी।
अहो यह कैसी शुभ काया, तरुण नहीं ऐसा मिल पाया ।।
दोहा :—जादूगरनी है प्रथम कीना मंत्र प्रयोग।
मेंडा त्वरित बनाकर उसको रखा गले में तोग[1] ।।
जोग सब कर्मों से पाया ।।१६।।
दिवस में मेंडे रूप माँही, रात में नर दे बनवाई।
फँसा वह उसकी जाल माँही, ध्यान कुछ रहता है नाँही ।।
दोहा :—शान्ता काफी देर तक, कीना है इन्तजार।
नहीं आने पर सोचा मन में, यहाँ मंत्र व्यापार ।।
उलझ गये कहीं पति राया ।।१७।।
कांगरु में सभी मंत्र जाने, फ़ंसा लिया जादू के वहाने।
आने में नाँय हृदय माने, कहां मैं जाऊं उन्हें लाने ।।
दोहा :—एकान्त माँही बैठकर, कीना हिए विचार।
नार वेश को छोड़ पुरुष का वेश लेऊँ मैं धार ।।
बाजार से वेश मंगवाया ।।१८।।
पुरुष का वेश बना लीना, कमर में कटार रख दीना।
रुमाल एक कर माँही लीना, सभा में जाऊं विचार कीना ।।
दोहा :—राज सभा में आय के, खड़ा रहा उस वार।
भूप देख कर सोचे मन में, कौन है राजकुमार ।।
मान सह आसन दिलवाया ।।१९।।

१- भेड़ के गले में वांधने का तार।

परिचय अपना बतलावे, दूर से आया दरसावे।
नौकरी अच्छी मिल जावे, भाव यह अपने बतलावे ॥
दोहा :—सुनकर नरपति ने कहा जो चाहो तैयार।
अच्छा पद देकर के उसको कर लिया तावेदार ॥
भाग्य से ऊँचा पद पाया ॥२०॥

वेतन नित शान्ता वहाँ पावे, कीर्ति की खोज भी करवावे।
कहीं पर पता जो मिल जावे, पकड़ कर उनको यहाँ लावे ॥
दोहा :—चातुर्यता इनकी लखी सभी कार्य के माँय।
नरपति अपने रखे पास में, दीना सब समझाय ॥
भरोसा खूब करे राया ॥२१॥

जहां भी नरपति जी जावे, साथ में इनको ले जावे।
घूमने एक दिवस जावे, दूर जंगल में निकल जावे ॥
दोहा :—और सभी पीछे रहे, अश्व ले गये दूर।
आगे जाते जंगल माँही, भरा सरोवर पूर ॥
बुझाले प्यास हिए लाया ॥२२॥

उतर कर घोड़े से आये, नीर पी शान्ति परम पाये।
भूप के यों मन में आये, यहीं मैं सोऊँ चित्त चावे ॥
दोहा :—भूप वहां आराम से, निद्रागत हो जाय।
उधर एक बनराजा आकर, नृप को खाना चाय ॥
शेर शान्ता के नजर आया ॥२३॥

जहरीला तीर छोड़ दीना, शेर का शीश छेद कीना।
गूँजकर परभव पा लीना, भूप के प्राण बचा दीना ॥
दोहा :—नींद खुली नृप देखकर, मन में विस्मय पाय।
यदि न होते मेरे साथ ये, देता प्राण गँमाय ॥
जीवन इन मुझको बक्षाया ॥२४॥

सभा के बीच प्रश्न कीना, किसी ने प्राण दान दीना।
उऋण हो कैसे क्या कीना, उत्तर सब सोच कहो भीना ॥
दोहा :—सोच सभी ने यों कहा, प्राण समा जग नाँय।
अत: प्राण से प्यारी होवे, वही उन्हें दिलवाय ॥
भूप को सबने दरसाया ॥२५॥

बात सुन भूपति मन आयी, प्यारी मुझ कंवरी सुखदायी।
वही मैं दे दूं चित्त चायी, बात यह सबको बतलायी ॥
दोहा :—शान्ती को नृप यों कहें, पुत्री साथ में व्याह।
स्वीकृति देकर हलका करिये, यही है मन में चाह ॥
शान्ति हो मुख से फरमाया ॥२६॥

सोच कर बात मान लीनी, हृदय की बात वहाँ कीनो।
रखूँ नहीं कोई बात छानी, आप भी सुन लेवें जानी ।।
दोहा :—खड्ग साथ में ब्याह हो, पास न रहे छह मास।
नियम बिगाड़े यदि कोई भी आयु होती ह्रास ।।
इसी से कहकर समझाया ।।२७।।

भूप कहे शर्तें सब मानी, कही सो मैंने ली जानी।
ठीक कही नही हो मनमानी, नहीं रही बात यहां छानी ।।
दोहा :—खड्ग साथ में ब्याह कर, रहे महल के माँय।
दोनों के ही भवन अलग हैं, नहीं पास में जाय ।।
कंवरी ने मन को समझाया ।।२८।।

माह छह अवधि इन कीनी, रीति है कुल की कह दीनी।
अच्छी है बात मान लीनी, देवी की आज्ञा सुना दीनी ।।
दोहा :—समय जा रहा सद्य ही, शान्ता करे बिचार।
यहां पता नहीं मिले पति का, खुलसी पोल अबार ।।
मौका लख नृप को फरमाया ।।२९।।

भावना मेरी सुन लेना, घोषणा सब में करा देना।
पालतू पशु पक्षी जितना, लाकर के यहां दिखा देना ।।
दोहा :—सारे नगर में घोषणा, कर दीनी उस बार।
गली-गली में जाकर लावे, दिखलावे सरदार ।।
सप्ताह इक योंहि निकलाया ।।३०।।

मोहल्ला राज-वैद्य आया, नंबर लख संतरी धाया।
छिपाना मेंडे को चाया, सन्तरी पकड़ उसे लाया ।।
दोहा :—शान्ता उसको देखकर सन्त्री को दरसाय।
महल माँहि इसको ले जावो, छोड़ो मत बतलाय ।।
तार गल माँही दिखलाया, ।।३१।।

वैद्य की पुत्री चल आई, मेंडा मम देओ दरसाई।
कँवर कहे मोल लिया वाई, वेचूं नहीं ऐसे वतलाई ।।
दोहा :—वार-वार कहती रही, किन्तु नहीं दे ध्यान।
आखिर हार थाक कर सीधी आई अपने स्थान ।।
मेंडे के रुपये भिजवाया ।।३२।।

सोचती वे हैं राज जँवाई, चले वहां किस की भी नाँही।
दाम तो आये घर माँही, आलंबन दीना गमाई ।।
दोहा :—शान्ता आ निज भवन में देखे मेंडे ताँय।
धागे को झटके में तोड़ा, वही पति दिखलाय ।।
सोच रहा क्या है यह माया ।।३३।।

कहां से कहां चला आया, भवन यह नूतन दिखलाया।
कँवरी को देख स्थान आया, खोई सब याद वापिस पाया ॥
दोहा :—कई दिनों के बाद में, पति पत्नी मिल जांय।
उस आनन्द को कहने की भी कवि में शक्ति नाँय ॥
जाने सब सर्वज्ञ महाराया ॥३४॥
पति को शान्ता साथ लाई, कांगरु भूप पास आई।
देखकर नृप गये चकराई, बात क्या नहीं समझ पाई ॥
दोहा :—शान्ता बोली हे पिता ! कहूँ हाल दरसाय।
जिस खांडे के साथ में ब्याही, राजकुमारी राय ॥
नाथ ये उस के महाराया ॥३५॥
बहिन मुझ राजकुमारी, इन्हीं की मैं हूँ सन्नारी।
वेश जो बदला इस वारी, शील की रक्षा हित धारी ॥
दोहा :—सारी बात सुन भूपति, बुद्धि रहा सराह।
कितना कारज कर दिखलाया, नारी यह कहलाय ॥
बात सब मानी महाराया ॥३६॥
कीर्ति रहे श्वसुर गृह माँही, सप्ताह के बाद यों मन आई।
कांगरु भूप पास आई, बात वह मन की बतलाई ॥
दोहा :—पन्ना पुर के भूप को, देवें आप समझाय।
शान्ता मेरे साथ आ गई, इससे खिन्न हो जाय ॥
आपकी माने बात राया ॥३७॥
प्रयत्न तब चालू कर दीना, उसी क्षण समाचार कीना।
पत्र लख सूचित कर दीना, उन्हें दामाद मान लीना ॥
दोहा :—पन्ना पुर के भूप की, सुनी सूचना कान।
कीर्ति अरु शान्ता के दिल में, आनन्द हुआ महान ॥
उसी क्षण चित्त में यों आया ॥३८॥
जननी और जन्म भूमि माँही, चले अब चिन्ता कुछ नाँही।
वात तब नृप को दरसाई, जायेंगे जन्म भूमि माँही ॥
दोहा :—आज्ञा हमको दीजिए, जावें देश मंझार।
राजा वोला अभी रुको कुछ, छोड़ों आप विचार ॥
आखिर कीर्ति ने समझाया ॥३९॥
जँवाई कही वात मानी, जावेंगे देश भूप जानी।
करूँ क्यों देरी दिल आनी, द्रव्य दिया खूबहि मनमानी ॥
दोहा :—उस ही क्षण वे चल दिये, दो नारी हैं लार।
और अनेकों हाथी घोड़े, दास-दासी परिवार ॥
जपी नवकार को सिधाया ॥४०॥

उधर की बात सुनो भाई, हुआ क्या संभव पूर माँही।
कीर्ति की मां वन से आई, झूंप में बालक नहि पाई।।
दोहा :—इधर-उधर संभालकर, बैठी झूंप में आय।
कोई उठाकर ले गया उसको, या नदी में गिर जाय।।
शोक दिल माँही अति छाया ।।४१।।
पागल सम वहां होय जावे, कहाँ है बालक कोई लावे।
जीवित है कीर्ति दरसावें, मेरी तो नैय्या डूब जावे।।
दोहा :—कोई दयालु कर दया करदे मुझे सहाय।
वर्षों तक वह रही वहाँ पर, आखिर दिल उठ जाय।।
यहाँ से जाऊँ चित्त चाया ।।४२।।
एक दिन वहां से निकल जावे, घूमती पन्ना पुर आवे।
मरूँ मैं यों मन में लावे, उसी दिन कीर्ति वहां आवे।।
दोहा :—धूम-धाम से नगर में, हाथी होदे लाय।
उसी समय वह दन्ति सामने, आकर के गिर जाय।।
लोग सब देख घबराया ।।४३।।
करी यदि एक कदम जावे, उसी के पग तल आ जावे।
कीर्ति लख नीचे उतर आवे, दन्ति से उसको बचवावे।।
दोहा :—उसी समय वहां कीर्ति के कपड़े दन्त में आय।
फट गये उससे उस बुढ़िया के, चिन्ह नजर गये आय।।
नेत्र से लखकर गस खाया ।।४४।।
लोग एकत्रित हो जावें, कारण सब जानन चित चावे।
चिन्ह लख क्यों यह गस खावे, उठा मंत्री के घर जावे।।
दोहा :—अल्प समय के बाद ही, बुढ़िया होश में आय।
एक ध्यान से देखे कीर्ति को सब जन विस्मय पाय।।
कारण क्या समझ नहीं पाया ।।४५।।
पालक पिता मंत्री पास आया, शान्ति से उसको दरसाया।
माता जी क्या यह दिखलाया, कि जिससे इस स्थिति में आया।।
दोहा :—बुढ़िया बोली क्या कहूँ, दृष्टि दगा खा जाय।
अतः मुझे जाने दो यहां से, रुकने से दुख पाय।।
श्रवण कर मंत्री चित्त लाया ।।४६।।
रहस्य है निश्चय इस माँही, जाने बिन जाने दूँ नाँही।
पता करूँ कितनी गहराई, सत्य अनुमान है या नाँही।।
दोहा :—कहो आपकी नजर में, कीर्ति क्या दिखलाय।
सुनते ही वह बोली मुख से, सच्ची देऊँ सुनाय।।
भेद वह सारा बतलाया ।।४७।।

श्रवण कर मंत्री ध्यान कीना, उसी दिन सरिता से लीना।
मिलान में सच दरसा दीना, असली मां यही समझ लीना ।।
दोहा :—मंत्री दिल में हो गया, पूरण जब विश्वास।
यही कीर्ति की माता है सो, रखली अपने पास ।।
खूब सम्मान हि करवाया ।।४८।।
सदस्य परिवार का मानें, अन्य नहीं कोई उसे जाने।
सेवा में कमी नहीं आने, भक्ति कर आनन्द मन माने।
दोहा :—दुख संकट सब नष्ट हो, सुख सम्पति आ जाय।
बुढ़िया दिल से भूल गई दुख, आनन्द में दिन जाय ।।
प्रभु का नाम याद आया ।।४९।।
मंत्री सब काम काज तज कर, करे हैं धर्म शान्ति लाकर।
कीर्ति को भूपति बुलवा कर, दिया मंत्री पद खुश होकर ।।
दोहा :—धर्म घोष मुनि बिचरते, आये पन्ना शहर।
सुनी आगमन सबके उपजी, हिय में आनन्द लहर ।।
धन्य दिन आज का आया ।।५०।।
वंदन हित आये नरनारी, बाणी सुन दिल माँही धारी।
त्याग ही है आनन्दकारी, मंत्रि दम्पत्ति दिल में धारी ।।
दोहा :—कीर्ति पुत्र को पूछ कर, दीक्षा लेंगे आय।
घर आकर के कहे पुत्र से, दीक्षा लें चित्त चाय ।।
अवसर शुभ सन्मुख यह आया ।।५१।।
कीर्ति भी मन माँही लाया, काम है अच्छा सुखदाया।
नहीं दूँ अन्तराय भाया, ठाठ से दीक्षा स्थल आया ।।
दोहा :—मंत्रि दम्पत्ति दीक्षा ले, गुरु गुरुणी के पास।
ज्ञान ध्यान में रम कर, पूरा लीना हिए प्रकाश ।।
अन्त में अमर गती पाया ।।५२।।
कीर्ति दम्पत्ति श्रावक व्रत लीना, मास में षड् पौषध कीना।
पाप से डरे रंग भीना, सचित का त्याग कर दीना ।।
दोहा :—शुद्ध साधना कर यहां, अन्त स्वर्ग अपनाय।
प्राज्ञ प्रसादे 'सोहन मुनि' कहे, जीवन सफल बनाय ।।
धार जिन आज्ञा हिय भाया ।।५३।।

□□